मालेगाँव (महा.) के भक्त मिले अपने आत्मगाँव पहुँचानेवाले संत के सत्संग में... सराबोर हुए भक्तजन पुण्यमयी सत्संग-सरिता में। पिछले ७ वर्षों की प्रतीक्षा पूर्ण हुई प्रभु के प्यारे, गुरु के दुलारों की।

पूज्यश्री के सत्संग के लिए वर्षों से बाट देखते पूनावासियों ने पाया प्रेमरस, प्रभुरस... साथ में होली महोत्सव।
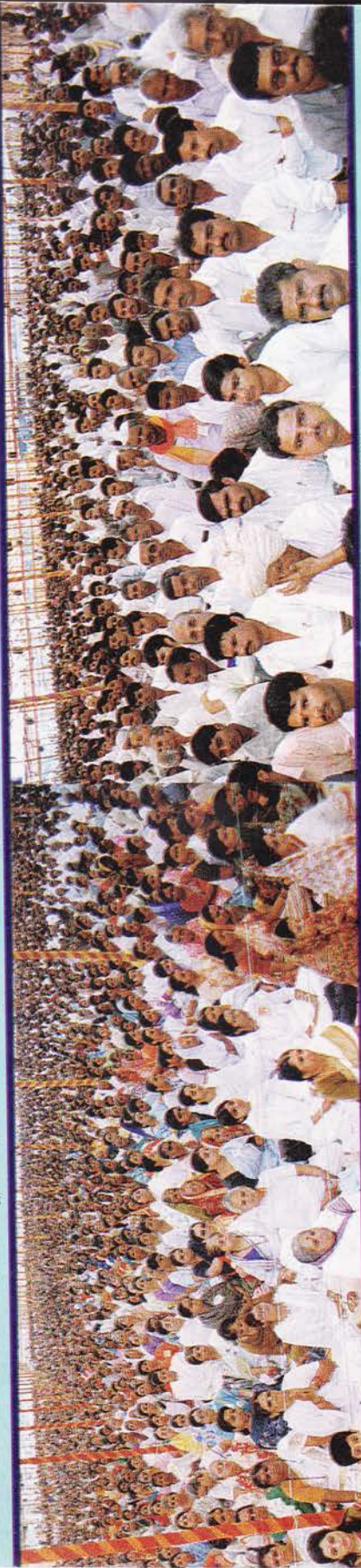
औरंगाबाद (महा.) में आयोजित 'शिक्षक, साधक ध्यान योग शिविर' का लाभ लेकर कृतार्थ होते हुए धनभागी शिक्षक और साधक भक्त।

॥ ऋषि प्रसाद ॥

वर्ष : १२
अंक : ११२
९ अप्रैल २००२
चैत्र मास, विक्रम संवत् २०५८

सम्पादक : कौशिक वाणी
सहसम्पादक : प्रे. खो. मकवाणा

मूल्य : रु. ६-००

सदस्यता शुल्क
भारत में
(१) वार्षिक : रु. ५०/-
(२) पंचवार्षिक : रु. २००/-
(३) आजीवन : रु. ५००/-

नेपाल, भूटान व पाकिस्तान में
(१) वार्षिक : रु. ७५/-
(२) पंचवार्षिक : रु. ३००/-
(३) आजीवन : रु. ७५०/-

विदेशों में
(१) वार्षिक : US $ 20
(२) पंचवार्षिक : US $ 80
(३) आजीवन : US $ 200

कार्यालय
'ऋषि प्रसाद'
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अमदावाद-३८०००५.
फोन : (०७९) ७५०५०१०, ७५०५०११.
e-mail : ashramamd@ashram.org
web-site : www.ashram.org

प्रकाशक और मुद्रक : कौशिक वाणी
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, साबरमती, अमदावाद-३८०००५ ने पारिजात प्रिन्टरी, राणीप, अमदावाद एवं विनय प्रिन्टिंग प्रेस, अमदावाद में छपाकर प्रकाशित किया।

Subject to Ahmedabad Jurisdiction

अनुक्रम

पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग

SONY चैनल पर 'संत आसारामवाणी' सोमवार से शुक्रवार सुबह ७.३० से ८ एवं शनिवार और रविवार सुबह ७.०० से ७.३०
संस्कार चैनल पर 'परम पूज्य लोकसंत श्री आसारामजी बापू की अमृतवर्षा' रोज दोप. २.०० से २.३० एवं रात्रि १०.०० से १०.३०

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्र-व्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक और स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें।

सामान्य और विशेष ज्ञान

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

ज्ञान नित्य है, अनादि है और अनंत है। ज्ञान का न जन्म होता है न मृत्यु।

ज्ञान दो प्रकार का होता है - एक होता है सामान्य सत्ता का ज्ञान और दूसरा होता है करणजन्य विशेष ज्ञान।

सामान्य सत्ता का ज्ञान नित्य है। करणजन्य विशेष ज्ञान सापेक्ष है। वह देश, काल और वस्तु के इर्द-गिर्द मँडराता है। सामान्य सत्ता के ज्ञान से ही करणजन्य विशेष ज्ञान होता है। जैसे, सूर्य का प्रकाश सामान्य सत्ता के रूप में है। दर्पण लिया और वहाँ विशेष दिखा तो यह विशेष की विशेषता सामान्य के आश्रय से ही है।

सामान्य सत्ता का ज्ञान परमात्मा है और करण कहा जाता है इंद्रियों को। मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार - ये अंदर की इंद्रियाँ हैं, उन्हें अंतःकरण कहा जाता है। आँख, नाक, कान आदि इंद्रियाँ बहिःकरण कहलाती हैं। इनसे (करण विशेष से) जो ज्ञान होता है वह परमात्मा (सामान्य सत्ता) के कारण ही होता है।

इन इंद्रियों के कारण जगत में भिन्नता दिखती है किन्तु जिस सामान्य सत्ता से दिखती है, वह सदा एकरस है तथा उसीका ज्ञान पाना मानव-जीवन का परम लक्ष्य है।

जिस ज्ञान की मौत नहीं होती, जिस ज्ञान का जन्म नहीं होता, वही हमारी आत्मा है और वही परमात्मा है। जब तक उसका ज्ञान नहीं होता तब तक लगता है कि 'परमात्मा मरने के बाद मिलेंगे... वैकुंठ में जायेंगे तब मिलेंगे... गुरु कृपा करेंगे फिर मिलेंगे... ।' परन्तु जब गुरुकृपा हुई और ठीक से जान लिया तो लगेगा कि उसे पाना कितना सरल है !

इतना सरल कि अर्जुन को युद्ध के मैदान में मिल गया, राजा जनक को घोड़े की रकाब में पैर डालते-डालते मिल गया, राजा खट्वांग को दो मुहूर्त में मिल गया और राजा परीक्षित को सात दिन में कथा सुनते-सुनते मिल गया !

परमात्मा को पाना सरल भी है और कठिन भी। तीव्र, तीव्रतर अथवा तीव्रतम जिज्ञासा तथा छटपटाहट हो व पवित्रता हो और सद्गुरु मिल जायें तो बड़ा सरल हो जाता है।

एक छोटा-सा विनोदी दृष्टांत है :

बुद्धूसिंह की बड़े घर में शादी हो गयी। उसे दहेज भी खूब मिला। यहाँ तक की सूई भी सोने की मिली। बुद्धूसिंह उस सूई से कढ़ाई करने लगा। कढ़ाई करते-करते सूई हाथ से गिर गयी। संध्या का समय था। वह भागा और बाहर सड़क के किनारे बिजली के खंभे की रोशनी में सूई ढूँढ़ने लगा।

सड़क पर चलते लोगों ने पूछा :

''भाई ! क्या कर रहे हो ?''

बुद्धूसिंह : ''क्या बताऊँ ? अभी फुर्सत नहीं है, बाद में बताऊँगा।''

लोगों ने फिर पूछा : ''आखिर बात क्या है ?''

बुद्धूसिंह : ''मेरी सोने की सूई खो गयी है। मैं किसी साधारण सूई के लिए मेहनत नहीं कर रहा हूँ।''

लोग : ''सोने की सूई है तो खोजनी ही पड़ेगी लेकिन यहाँ कैसे गिरी ?''

बुद्धूसिंह : ''गिरी तो घर में थी किन्तु उधर दीया जलाना पड़ता, इसलिए इधर ढूँढ़ रहा हूँ।''

अब यह बुद्धूसिंह की चतुराई है या बेवकूफी कि घर में कौन दीया जलाये ? इससे तो अच्छा बाहर रोशनी में ही ढूँढ़ लें।

ऐसे ही हम भी जहाँ आनंद का खजाना छुपा है, जहाँ सुख का सागर लहरा रहा है तथा जहाँ सब

दुःखों के अंत की कुंजी पड़ी है, उस अंतर्यामी आत्मदेव में गोता नहीं मारते और सुख के लिए बाहर भटकते रहते हैं।

उस बुद्धूसिंह ने तो ३-४ घंटे गँवाये होंगे परन्तु हम तो कई सदियों से, कई जन्मों से संसार की मजदूरी में समय गँवाते आ रहे हैं। सुख को बाहर खोजते आ रहे हैं कि सर्टिफिकेट मिल जाय तो सुखी हो जाऊँ... नौकरी मिल जाय तो सुखी हो जाऊँ... शादी हो जाय तो सुखी हो जाऊँ... दुश्मन मर जाय तो सुखी हो जाऊँ...

यह सब हो जाय तब भी हम पूर्ण सुखी तो होते नहीं केवल कुछ समय के लिए सुखाभास होता है। फिर भी इन बाह्य सुखों के पीछे ही अपनी जिंदगी बरबाद किये जा रहे हैं और यह केवल एक-दो लोगों की बात नहीं है। गोरखनाथजी कहते हैं :

एक भूला दूजा भूला, भूला सब संसार।
बिन भूल्या एक गोरखा, जाके गुरु का आधार॥

सारा संसार यही भूल कर रहा है। सभी बाह्य सुखों में उलझ रहे हैं। इससे तो केवल वही बच पाता है जिसको सद्गुरु का आधार है।

आप जो मेहनत कर रहे हैं वह किसलिए कर रहे हैं ? दुःखों का अंत हो और सुखों की प्राप्ति हो इसीलिए मेहनत कर रहे हैं। सारी जिंदगी बीत जाती है फिर भी दुःखों का अंत नहीं होता है। कुछ-न-कुछ दुःख बना ही रहता है और जो सुख मिलते हैं वे भी स्थायी नहीं होते हैं क्योंकि खोज होती है बाहर...।

कभी न छूटे पिंड दुःखों से, जिसे ब्रह्म का ज्ञान नहीं।

मूल है सामान्य ज्ञान, उसके आश्रय से वृत्तियाँ उठती हैं और विशेष-विशेष में भटकाती हैं, सामान्य में नहीं आती हैं। सोकर जब प्रभात में उठते हैं तब 'मैं हूँ' यह खबर सामान्य ज्ञान से ही आती है, फिर विशेष ज्ञान चालू हो जाता है कि 'मैं मोहन हूँ... मैं सोहन हूँ... मैं कमला हूँ।'

सामान्य ज्ञान नित्य है। सृष्टि से पहले भी ज्ञान है। सृष्टि हुई तब भी ज्ञान रहता है और सृष्टि का प्रलय हो जाता है तब भी ज्ञान रहता है। प्रलय हो जाता है, कुछ नहीं रहता तब भी उस प्रलय को देखनेवाला रहता है।

एक व्यक्ति ने महल बनवाया। बड़ा आलीशान महल था। वह व्यक्ति मेहमानों को महल दिखाने ले गया। महल देखकर लौटते समय उसने अपने पुत्र से कहा : ''जाओ, अन्दर देखकर आओ कि कोई रह तो नहीं गया ?''

बेटा गया और महल के ऊपर की छत से बोला : ''पिताजी ! यहाँ कोई नहीं है।''

पिताजी मुख्य द्वार को ताला लगाने लगे। बेटे ने पूछा : ''पिताजी ! ताला क्यों लगा रहे हैं ?''

पिता : ''तुमने ही तो कहा कि कोई नहीं है। इसीलिए ताला लगा रहा हूँ।''

पुत्र : ''पिताजी ! 'कोई नहीं है' - ऐसा बोलनेवाला मैं तो हूँ।''

'कोई नहीं है।' कहनेवाला तो कोई है। इसी प्रकार महाप्रलय हो जाता है, कुछ भी नहीं रहता है, ब्रह्मा, विष्णु और शिव के लोक भी महाप्रलय में लीन हो जाते हैं, उसकी भी खबर नित्य ज्ञान देता है। 'रात्रि में बड़ी अच्छी नींद आयी, कुछ नहीं दिखा।' तो अच्छी नींद आयी, कुछ नहीं दिखा... इसको तो कोई देख रहा है। इसको जो देख रहा है वही प्रलय का ज्ञान भी दे रहा है। दोनों एक ही हैं।

यथा पिंडे तथा ब्रह्मांडे... जो पिंड में है वही ब्रह्मांड में है। जो पानी की बूँद में है वही सागर में है। जो श्वास तुम्हारे नाक के द्वारा जाता है वह विराट के वायुतत्त्व के साथ जुड़ा है, जो जलतत्त्व तुम्हारे भीतर है वह व्यापक जलतत्त्व से जुड़ा है। इसी प्रकार अन्य तत्त्व भी जुड़े हुए हैं।

अगर सूर्य ठंडा हो जाय तो वैज्ञानिक कहने को भी नहीं रहेंगे कि तुम प्रकाश की कुछ व्यवस्था करो। जिस समय सूर्य ठंडा हो गया उस समय आप भी नहीं रहेंगे। जैसे सूर्य से आपका ताप जुड़ा है, वैसे ही समान्य ज्ञान के साथ विशेष ज्ञान जुड़ा हुआ है और उसी विशेष ज्ञान में उलझकर हम मर रहे हैं।

'हमें यह मिले... यह मिले...' में ही जीवन पूरा हो जाता है। जो अपनी इच्छा के अनुसार जगत की चीजें पाता है, उसे संदेह और डर बना ही रहता है। 'पत्नी तो सुंदर होनी चाहिए...' अगर सुंदर मिल

गयी तो शंका के शिकार हो जाते हैं कि 'बड़ी सुंदर है, पड़ोसी देखते होंगे, फलाना देखता होगा।' तो गया मजा...

ऐसे ही धन मिला तो फिर उसको रखने की चिंता रहती है और धन चला न जाय इसका भय रहता है। धन आया है तो चला जायेगा - यह बात पक्की है। या तो धन चला जायेगा या धन को सँभालनेवाला चला जायेगा।

ऐसा कोई सुखभोग नहीं,
जिसके पीछे भय, दुःख, रोग नहीं।
ऐसा कोई संयोग नहीं,
जिसका कभी वियोग न हो॥
भोगी होकर सब पछताते हैं...

हम सुख लेने के लिए जो मजदूरी करते हैं, वही हमारे दुःख का कारण बन जाता है। इससे तो अच्छा है कि सुख बाँटो और अपने आत्मविश्रांति के सच्चे सुख से एकाकार हो। सुख-भोग की वासना को हटाओ। जो सुख के दाता बनते हैं वे कभी दुःखी नहीं हो सकते। जो यश के दाता बनते हैं उन्हें यश की कमी नहीं होती। अतः सुख के भोक्ता मत बनो, यश के भोक्ता मत बनो।

मिलता है विशेष, सामान्य नहीं। सामान्य तो सदा मौजूद रहता है। विशेष मिलता है तो बिछुड़ भी जाता है। जो मिलता है वह बिछुड़ता है, ऐसा समझकर उसका उपयोग कर लो और सामान्य में विश्रांति पाओ।

अगर सामान्य सत्ता में आ गये तो आप सारी विशेषताओं के स्वामी हो गये। अपने घड़े का पानी सरोवर में डाल दिया तो घड़े का सारा पानी सरोवर हो गया।

जल में कुंभ कुंभ में जल बाहर भीतर पानी।
फूटा कुंभ जल जलै समाना यह अचरज है ज्ञानी॥

अपना घड़ा आप सरोवर में डालते हैं और भरकर उठाते हैं तब भारी लगता है परन्तु सरोवर में रहता है तब भारी नहीं लगता। अगर घड़ा फूट गया तो सरोवर का पानी और घड़े का पानी एक हो जाता है।

ऐसे ही आप मन-बुद्धि में आये हुए 'मैं-मेरे' को छोड़ दो और अपने सामान्य ज्ञान में आ जाओ तो सारा जगत आपका अपना-आपा हो जायेगा, सारा विश्व आपकी विहार-वाटिका हो जायेगा।

*

उन्नति की कुंजियाँ

साधक की उन्नति के प्रधान चिह्न क्या हैं ?

साधन में प्रेम होना, साधन में जरा-भी परिश्रम प्रतीत न होना, महापुरुषों के जीवन में श्रद्धा होना और भगवान पर विश्वास होना - इन चार सद्गुणों से संपन्न साधक द्रुतगति से अपने साधना-मार्ग में आगे बढ़ता है।

आपके जीवन का मुख्य कार्य प्रभु-प्राप्ति ही है। शरीर से संसार में रहो किन्तु मन को हमेशा भगवान में लगाये रखो।

केवल बड़ी-बड़ी बातें बनाने से कुछ हाथ नहीं लगेगा। अपने मन को परमात्मा में लगाने की साधना तुम्हें खुद करनी पड़ेगी।

भगवद्स्मरण, भगवद्गुणगान और भगवद्चिंतन में समय व्यतीत करना ही समय का सदुपयोग है। आपका हर कार्य भगवद्भाव से युक्त हो, भगवान की प्रसन्नता के लिए हो इसका ध्यान रखें।

किसी भी व्यक्ति, किसी भी परिस्थिति, घटना और काल का आप पर कोई प्रभाव न पड़े। सारे प्रभावों से छूटकर केवल अपने आत्म-परमात्म स्वभाव में रहने की भरपूर चेष्टा करें। आपके मन में परमात्मा के सिवाय अन्य किसीकी आवश्यकता या चाह न हो तो आवश्यक वस्तुएँ स्वयमेव आपकी सेवा में हाजिर हो जायेंगी। एक बार अपना जीवन ऐसा बनाकर तो देखो।

केवल भगवान में ही विश्वास, केवल भगवान की ही आवश्यकता, केवल भगवान की ही चाह और केवल भगवान ही साधन - ये चार बातें जिस साधक में होती हैं उसका योगक्षेम भगवान स्वयं वहन करते हैं।

शास्त्र-अमृत

❊ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ❊

पौरुष दो प्रकार का होता है - एक शास्त्र के अनुसार और दूसरा शास्त्र विरुद्ध । जो शास्त्र को त्याग करके अपनी इच्छा के अनुसार विचरता है वह सिद्धता नहीं पायेगा । जो शास्त्र के अनुसार पुरुषार्थ करता है वह सिद्धता को प्राप्त होगा ।

जो पुरुष व्यवहार तथा परमार्थ में आलसी होकर और परमार्थ को त्यागकर मूढ़ हो रहे हैं, वे दीन होकर पशुओं के सदृश दुःख को प्राप्त हुए हैं । तुम पुरुषार्थ का आश्रय लो । सत्संग और सत्शास्त्ररूपी आदर्श के द्वारा अपने गुण-दोष को देखकर दोष का त्याग करो और शास्त्रों के सिद्धांतों पर अभ्यास करो । जब दृढ़ अभ्यास करोगे तब शीघ्र ही आनंदवान होगे ।

श्रेष्ठ पुरुष वही है जिसने सत्संग और सत्शास्त्र द्वारा बुद्धि को तीक्ष्ण करके संसार-समुद्र से तरने का पुरुषार्थ किया है । जिसने सत्संग व सत्शास्त्र द्वारा बुद्धि तीक्ष्ण नहीं की और पुरुषार्थ को त्याग बैठा है, वह पुरुष नीच-से-नीच गति को पायेगा । जो श्रेष्ठ पुरुष हैं, वे अपने पुरुषार्थ से परमानंद पद को पायेंगे और फिर दुःखी न होंगे ।

मनुष्य को सत्शास्त्रों और सत्संग से शुभ गुणों को पुष्ट करके दया, धैर्य, संतोष और वैराग्य का अभ्यास करना चाहिए । शुभ गुणों से बुद्धि पुष्ट होती है और शुद्ध बुद्धि से शुभ गुण पुष्ट होते हैं । जब शुभ गुण होते हैं तब आत्मज्ञान आकर विराजता है । शुभ गुणों में आत्मज्ञान रहता है ।

संतों और सत्शास्त्रों के अनुसार संवेदन, मन और इन्द्रियों का विचार रखना । जो इनसे विरुद्ध हों उनको न करना । इससे तुमको संसार का राग-द्वेष स्पर्श न करेगा । संतजन और सत्शास्त्र वही हैं जिनके विचार व संगति से चित्त संसार की ओर से हटकर उनकी ओर हो ।

जो कुछ पूर्व की वासना दृढ़ हो रही है उसके अनुसार जीव विचरता है पर श्रेष्ठ पुरुष अपने पुरुषार्थ से पूर्व के मलिन संस्कारों को शुद्ध करता है । जब तुम सत्शास्त्रों और ज्ञानवानों के वचनों के अनुसार दृढ़ पुरुषार्थ करोगे तब मलिन वासना दूर हो जायेगी ।

यदि चित्त विषय और शास्त्र विरुद्ध मार्ग की ओर जाय, शुभ की ओर न जाय तो जानो कि कोई पूर्व का मलिन कर्म है । जो संतज और सत्शास्त्रों के अनुसार चेष्टा करे और संसार-मार्ग से विरक्त हो तो जानों कि पूर्व का शुभ कर्म है । यदि तुम्हारा चित्त शुभमार्ग में स्थिर नहीं होता है तो भी दृढ़ पुरुषार्थ करके संसार-समुद्र से पार हो । श्रेष्ठ पुरुष वही है जिसका पूर्व का संस्कार यद्यपि मलिन था, परन्तु संतों और सत्शास्त्रों के अनुसार दृढ़ पुरुषार्थ करके सिद्धता को प्राप्त हुआ है ।

यह चित्त जो संसार के भोग की ओर जाता है उस भोगरूपी खाई में चित्त को गिरने मत दो ।

❊❊❊

भगवान श्रीरामचन्द्रजी ने अपने सद्गुरुदेव वशिष्ठजी महाराज से पूछा : ''हे भगवन् ! आप कहते हैं कि 'भावना के वश से असत् भी सत् हो जाता है ।' इसका क्या आशय है ?'' वशिष्ठ जी ने कहा : ''हे रामचन्द्रजी ! देश, काल, क्रिया, द्रव्य और संपदा इन पाँचों से भावना होती है । जैसी भावना होती है, वैसी ही सिद्धि होती है । पुत्र, दारादिक बांधव सब वासना रूप हैं । धर्म की वासना होती है तो बुद्धि में प्रसन्नता उपज आती है और पुण्य कर्मों से पूर्व भावना नष्ट हो शुभगति प्राप्त होती है । इससे अपने कल्याण के निमित्त शुभ का अभ्यास करना चाहिए ।''
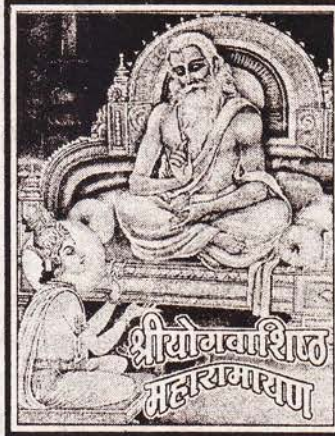
वशिष्ठ महाराज के अमृतवर्षी उपदेश सुनकर आत्मस्वरूपस्थ रामचन्द्रजी कह उठे : ''हे मुनीश्वर ! आपका उपदेश दृश्यरूपी तृणों का नाशकर्त्ता दावाग्नि है । आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक तापों का शांतकर्त्ता चन्द्रमा है । आपके उपदेश से मैं ज्ञातज्ञेय (जानने योग्य जान लिया) हुआ हूँ और पाँच विकल्प मैंने विचारे हैं । प्रथम यह है कि यह जगत मिथ्या है और इसका स्वरूप अनिर्वचनीय है, दूसरा यह कि आत्मा में आभास है, तीसरा यह कि इसका स्वभाव परिणामी है, चौथा यह कि अज्ञान से उपजा है और पाँचवाँ यह कि अनादि अज्ञान पर्यन्त है ।''

भगवान श्रीरामजी द्वारा विचारे इन पाँच विकल्पों को हम अपना बना लें तो कितना अच्छा हो !

ज्ञानी पुरुषों की महिमा और उनके संग का फल

[सत्संग]

जिस प्रकार भगवान के महान चरित्र, आदर्श और गुणों की महिमा अवर्णनीय है, उसी प्रकार भगवत्प्राप्त संत-महापुरुषों के पवित्रतम चरित्र और गुणों की महिमा का वर्णन भी कोई नहीं कर सकता है। ऐसे आत्मानुभव-सम्पन्न महापुरुष समता, शान्ति, ज्ञान, वैराग्य, करुणा, क्षमा, सौहार्द आदि पवित्र गुणों के भण्डार होते हैं।

नित्य परमात्मा में रमण करनेवाले सत्पुरुषों का मिलना बहुत दुर्लभ है और यदि वे मिल भी जायें तो भी उन्हें पहचानना बहुत कठिन है। फिर भी यदि ऐसे महापुरुषों से किसी प्रकार मिलना हो जाय तो उनसे अपने-अपने भाव के अनुसार लाभ अवश्य होता है, क्योंकि उनका मिलना अमोघ है। देवर्षि नारद ने कहा है :

महत्सङ्गस्तु दुर्लभोऽगम्योऽमोघश्च।

'महात्माओं का संग दुर्लभ, अगम्य और अमोघ है।' (नारदभक्तिसूत्र ३९)

किन्हीं सत्पुरुष का यदि संग हो जाय और उन्हें पहचाना न भी जाय तो भी उनके दर्शनमात्र से पापों का नाश तो होता ही है किन्तु जो लोग उन्हें किसी अंश में ही जानते हैं और उनसे साधारण ऐहिक लाभ उठाना चाहते हैं, उन्हें साधारण सांसारिक लाभ मिल जाते हैं। जिनमें श्रद्धा है पर साथ ही सकाम भाव है, वे लोग उनका संग करके इस लोक तथा परलोक के भोगों की प्राप्ति रूप वैषयिक लाभ प्राप्त करते हैं तथा जो उन्हें भलीभाँति पहचानकर श्रद्धा के साथ निष्काम भाव से उनका संग करते हैं, उनकी आज्ञा में चलते हैं और अपनी अहंता-ममता को उनके श्रीचरणों में अर्पित कर देते हैं, वे परमात्म-प्राप्ति भी कर सकते हैं। संत तुलसीदासजी ने सत्संग के विषय में कहा है :

तात स्वर्ग अपवर्ग सुख धरिअ तुला एक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सत्संग॥

बाह्य दृष्टि से तो वे साधारण मनुष्य की भाँति ही लगते हैं पर परमात्म-प्राप्ति के प्रभाव से उनकी आभा इतनी सूक्ष्म, प्रभावशाली, पवित्र, विलक्षण और दिव्य हो जाती है कि उनके दर्शन, सत्संग या उनसे वार्तालाप करने से तो लाभ होता ही है, उनके स्मरण-चिन्तन से भी बड़ा लाभ होता है। जब एक कामिनी के दर्शन, भाषण, वार्तालाप, चिन्तन या स्पर्श से कामी पुरुष के हृदय में काम का प्रादुर्भाव हो जाता है, तो भगवत्प्राप्त महापुरुष के दर्शन, चिन्तन, वार्तालाप से साधक के हृदय में भगवद्भाव और ज्ञान का प्रादुर्भाव होना स्वाभाविक ही है।

ऐसे महापुरुषों के हृदय में दिव्य गुणों के अपार भण्डार के साथ प्राणिमात्र के परम कल्याण की भावना सन्निहित रहती है, जिसके दिव्य बलशाली परमाणु नेत्र तथा रोमकूपों से निरन्तर निकलते रहते हैं और दूर-दूर तक पहुँचकर जड़-चेतन सभी पर अपना प्रभाव डालते हैं। इसका मनुष्यों पर तो अपने-अपने भावानुसार न्यूनाधिक रूप में प्रभाव पड़ता ही है, विविध पशु-पक्षियों, वृक्षों तथा आकाश, वायु, अग्नि, जल, मिट्टी और जड़-पाषाण, काष्ठ आदि पदार्थों पर भी असर पड़ता है। उनमें भी भगवद्भाव के पवित्र परमाणु प्रवेश कर जाते हैं। ऐसे सत्पुरुष जिस पशु-पक्षी को देख लेते हैं, जिस वायुमण्डल में रहते हैं, जो वायु उनके शरीर को स्पर्श करके जाती है, जिस जल में वे स्नान करते हैं, जिस भूमि पर निवास करते हैं, जिस वृक्ष, फल आदि का किसी प्रकार उपयोग करते हैं, जिस पाषाण-खण्ड को स्पर्श कर देते हैं, जहाँ पर बैठ जाते हैं और जिन तृण-अंकुरों पर अपने चरण रख देते हैं उन सभीमें भगवद्भाव के दिव्य कण न्यूनाधिक रूप में स्थित हो जाते हैं, जिससे वे देर-सवेर चेतनता को तो प्राप्त होते ही हैं और उन वस्तुओं को जो काम में लाते हैं या जिन-जिनको उनका संसर्ग प्राप्त होता है उन लोगों को भी जाने-अनजाने सद्भाव की प्राप्ति में सहायता प्राप्त हो जाती है। जिनमें श्रद्धा, ज्ञान तथा प्रेम होता है, उनको

दूसरों की अपेक्षा विशेष लाभ होता है।

महापुरुषों की वाणी का सुननेवालों पर उनकी (श्रोता की) पात्रता के अनुरूप प्रभाव पड़ता ही है, साथ-ही-साथ वह स्थान और वहाँ का वायुमण्डल भी विशेष प्रभावोत्पादक बन जाता है। वह वाणी (शब्द) नित्य होने के कारण सारे आकाश में व्याप्त हो जाती है और जगत के प्राणियों का सदा, सहज ही मंगल किया करती है। भावों के परमाणु अत्यन्त सूक्ष्म होते हैं, इससे उनकी प्रत्यक्ष प्रतीति नहीं होती पर वे उसी प्रकार पवित्र सद्भावों का प्रसार करते हैं, जैसे प्लेग के कीटाणु रोग का विस्तार करते हैं। क्षयरोगी (टी.बी.) जहाँ रहता है, वहाँ उसके मरने के ६ महिने बाद भी क्षयरोग के कीटाणुओं का प्रभाव पाया गया है, वैसे ही सत्यस्वरूप ईश्वर में रहनेवाले के परमाणु कई वर्षों तक प्रभावकारी रहते हैं।

ऐसे सत्पुरुषों की प्रत्येक क्रिया सर्वोत्तम चरित्र, गुण और भावों से ओतप्रोत रहती है। अतः उनके चिन्तनमात्र से, स्मृतिमात्र से उनके चरित्र, गुण और भावों का प्रभाव दूसरों के हृदय पर पड़ता है। नाम की स्मृति आते ही नामी के स्वरूप का स्मरण हो आता है। स्पष्ट है कि स्वरूप के स्मरण से भी क्रमशः चरित्र, गुण और भावों की स्मृति हो जाती है, जो हृदय को उन्हीं भावों से भरकर निर्मल बना देती है। वस्तुतः, सत्पुरुष का मानसिक संग बहुत लाभदायक होता है, चाहे सत्पुरुष किसी साधक का स्मरण कर लें या साधक उनका स्मरण करे। अग्नि घास पर पड़ जाय या घास अग्नि में पड़ जाय, अग्नि का संग तुरंत उसके घासस्वरूप को मिटाकर अग्नि बना देता है। इसी प्रकार ज्ञान और वैराग्य की अग्नि से परिपूर्ण भगवत्प्राप्त महापुरुष के संग से साधक के दुर्गुण, दुराचार तथा अज्ञान का नाश हो जाता है। वे स्वयं आकर दर्शन दें तब तो यह केवल श्रीभगवान की अपार कृपा का ही फल है, परन्तु यदि साधक अपने प्रयत्न से उनके पास पहुँचे तो इससे सिद्ध होता है कि साधक के अन्तःकरण में शुभ संस्कार अवश्य हैं क्योंकि शुभ संस्कार हुए बिना सत्पुरुषों से मिलने की इच्छा और चेष्टा होती ही नहीं! फिर भी इसमें प्रधान कारण भगवान की कृपा ही है।

बिनु हरिकृपा मिलहि नहिं संता।

इस संसार में जितने भी तीर्थ हैं, वे सब केवल दो के ही सम्बन्ध से बने हैं - एक श्रीभगवान के किसी भी स्वरूप या अवतार के प्रागट्य, निवास, लीला-चरित्रादि के होने से और दूसरा परमात्म-प्राप्त महापुरुषों के निवास, तप, साधन, सत्संग-प्रवचन या समाधि आदि होने से।

आज भी जो लोग पवित्र तीर्थ या तपोभूमियों में निवास करते हैं, उनको अपनी-अपनी श्रद्धा तथा भाव के अनुसार प्रत्यक्ष लाभ अनुभव में आता है। इसका कारण यही है कि उक्त भूमि, जल तथा वातावरण में ईश्वर की लीला, चरित्रादि के या सत्पुरुषों की तपस्या, भक्ति, सदाचार, ज्ञान आदि के शक्तिशाली परमाणु व्याप्त हैं। विशेष और शीघ्र लाभ तो वे ही साधक प्राप्त करते हैं जो परमात्मा और सत्पुरुषों के संकेतों, आज्ञाओं का पालन करते हैं। जो जिज्ञासु साधक महापुरुषों की आज्ञा की प्रतीक्षा न करके सारे कार्य उनकी रुचि तथा भावों के अनुकूल करते हैं, उन पर भगवान की विशेष कृपा माननी चाहिए। वे शीघ्र ही मनुष्य-जीवन के परमलक्ष्य परमात्म-प्राप्ति को सिद्ध कर लेते हैं।

रंगों का महत्त्व

मानव-जीवन में रंगों का बड़ा महत्त्व है। प्रत्येक रंग की अपनी विशेषता है। सफेद रंग में शांति, शीतलता, सौन्दर्य, तृप्ति और शीघ्र प्रभावित करने का भाव है। नीला रंग बौद्धिक सूक्ष्मता, सात्त्विकता, व्यापकता का गुण लिये हुए है तो हरा रंग चंचलता, कल्पनाशीलता, प्रगतिशीलता तथा विनोदप्रियता आदि गुणों से भरपूर है। लाल रंग में वीरता, प्रभावोत्पादकता, क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष व कामुकता आदि के भाव हैं। पीले रंग में क्षमा, गंभीरता, स्थिरता, वैभवशीलता जैसे गुण विद्यमान हैं और वह हृदय के लिए लाभकारी है। मानसिक दुर्बलता दूर करने हेतु भी इसका उपयोग किया जाता है।

रंगों के विधिवत् उपयोग से शारीरिक एवं मानसिक विकारों को दूर करने में सहायता मिलती है। नीला रंग दर्द तथा खुजली में राहत प्रदान करता है तो आसमानी रंग पेट के रोगों में काम करता है। बैंगनी रंग अनिद्रा में लाभकारी है।

ज्ञानेन्द्रियों के आहार में सावधानी

[सत्संग]

हम जो भोजन लें वह ऐसा सात्त्विक और पवित्र होना चाहिए कि उसको लेने के बाद हमारा मन निर्मल हो जाय। ऐसा भोजन नहीं करना चाहिए जिससे आलस्य आये या तुरन्त नींद आ जाय। भोजन के बाद शरीर में उत्तेजना उत्पन्न हो जाय - ऐसा भोजन भी नहीं करना चाहिए।

भोजन केवल मुँह से ही नहीं किया जाता, कान से भी किया जाता है, आँख से भी किया जाता है, त्वचा से भी किया जाता है, नाक से भी किया जाता है और यहाँ तक कि मन से भी किया जाता है। शंकराचार्यजी का कहना है : **आहार्यन्ते इति आहारः ।** हम जो बाहर से भीतर ग्रहण करते हैं उसका नाम आहार है।

हम कान से जो भोजन करते हैं उसका हृदय पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है। जब आपको कोई किसीकी निन्दा सुनाता है तब आप भले ही उसे सच न मानें, लेकिन वह आपके मन में कम-से-कम संशय तो भरता ही है। यदि आप संशय को छोड़ भी दें तो निन्दा करनेवाले ने आपके मन में किसीके प्रति घृणा या द्वेष तो उत्पन्न कर ही दिया। यदि किसीके प्रति घृणा हुई तो वह व्यक्ति तो चाहे जैसा भी हो परन्तु आपके मन में तो घृणा उत्पन्न हो ही गयी, आपके मन में तो द्वेष आ ही गया। आपने कान से ऐसी चीज खायी जिसने आपके हृदय में संशय, घृणा व द्वेष भर दिया। इसलिए सावधान ! जैसे आप भोजन करने में अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखते हैं, वैसे ही सुनने में भी अपने हृदय के स्वास्थ्य का ध्यान रखिये। आप अपने कानों से ईश्वर-चर्चा, कीर्तन, सत्संग सुनेंगे तो आपका अन्तःकरण निर्मल होगा।

त्वचा द्वारा स्पर्श करते समय भी ध्यान रखिये क्योंकि स्पर्श भी त्वचा के द्वारा प्राप्त भोजन है। आप जानते हैं कि बिजली को छूयेंगे तो करन्ट लगेगा और प्राण जाने की सम्भावना है इसलिए आप उसे नहीं छूते। ऐसे ही उत्तेजक वस्तु का स्पर्श नहीं करना चाहिए। जो वस्तु आपके मन में कामविकार उत्पन्न करे उसे स्पर्श नहीं करना चाहिए। त्वचा वायु, ताप ग्रहण करती है। जब आप सूर्य-प्रकाश में अपने शरीर को ले जाते हैं तब सूर्य की रश्मियाँ आपके शरीर में प्रवेश करके आपका आहार बनती हैं, भोजन बनती हैं। जब आप शुद्ध वायु में रहते हैं तब वायु आपके शरीर में लगकर आपका शुद्ध भोजन बनती है। इसलिए ऐसे वातावरण में रहिये, जहाँ आपकी त्वचा को भी बढ़िया भोजन मिलता हो।

आप आँखों से क्या देखते हैं ? जो चीज आप देखते हैं उसे देखकर आपके मन में काम, क्रोध, लोभ आदि आते हैं कि भगवद्भाव आता है ? किसीका सुन्दर मकान देखा, फर्नीचर देखा तो मन में विचार आया कि ऐसा हमारे पास भी हो। आँख से देखी चीज तो बाहर रह गयी और मन में उदय हो गया लोभ। फिर उस चीज को पाने के लिए आपने अपनी बुद्धि लगाई और प्रयत्न किया। आपने आँखों से ऐसी चीजें खायीं कि वे चीजें आपके पास न होने पर आपको हीनता का, अभाव का अनुभव होने लगा और उनके प्राप्त होने पर आपकी उन वस्तुओं में ममता हो गयी, आप उनसे बँध गये। भगवत्प्राप्त महापुरुषों, भगवान के अवतारों, संतों के चित्रों को देखकर एवं हयात सत्पुरुषों के दर्शन करके आप अपने मन-मति को पावन करके अपने जीवन को ऊर्ध्वगामी दिशा भी दे सकते हैं अथवा टी.वी., सिनेमा देखकर समय, चरित्र और ऊर्जा के नाश से नारकीय जीवन को प्राप्त हो सकते हैं। अतः, सतत ध्यान रखिये कि आपकी आँखें जहाँ

तहाँ न चली जायें। इसी प्रकार आप नाक से भी ऐसी चीज तो नहीं सूँघते हैं कि जिससे आपका अन्तःकरण अपवित्र-मलिन हो जाय।

लोग अपने शरीर, घर, मकान को तो साफ-स्वच्छ रखते हैं परन्तु अपने अन्तःकरण की पवित्रता, निर्दोषता की ओर ध्यान नहीं देते। इसलिए बाहर की सुख-सुविधाएँ होते हुए भी भीतर से दुःखी, चिन्तित और अशांत हो जाते हैं। बाहर की चीजें तो संभव है कि साथ रहें या न रहें लेकिन आपका मन तो आपके बिल्कुल निकट है, सदा साथ है। यदि आपका मन दुःखी रहेगा, अज्ञान में रहेगा, भय में रहेगा, शोक में रहेगा तो आपके पास बाहर चाहे कितनी भी चीजें हों, उनसे आप कभी सुखी नहीं रह सकेंगे। आप अपने मन के धरातल पर उन्हीं विचारों को महत्त्व दें जिनसे आपका जीवन उन्नत हो, सफल हो और ईश्वराभिमुख हो। आप अपने मन से ऐसा न सोचें जो क्रूर हो, दूसरों को दुःख देनेवाला हो। अतः, मन से जो विचार करें वह ऐसा निर्मल हो कि उससे निर्मल वातावरण बन जाय।

हमारे मानसिक भावों का, विचारों का एक परिमंडल हमारे चारों ओर बनता है। किसीका मण्डल बड़ा बनता है तो किसीका मण्डल छोटा बनता है। जैसे कभी-कभी सूर्य-चन्द्र के चारों ओर परिमण्डल दिखाई पड़ता है, वैसे ही हमारे शरीर से जो तन्मात्राएँ निकलती हैं, विचारों के जो सूक्ष्म कण प्रवाहित होते हैं, वे हमें चारों ओर से घेरे रहते हैं। यदि वे रश्मियाँ, तन्मात्राएँ, किरणें, शांति-सौम्यता-सद्भाव से सम्पन्न हों तो हमारे पास आनेवाला, हमारे वातावरण में रहनेवाला भी पवित्र विचारों से सम्पन्न हो जाता है। इसलिए हमारे मन की जो पवित्रता है, उससे केवल अपना ही कल्याण नहीं है बल्कि वह सम्पूर्ण समाज के लिए, सम्पूर्ण विश्व के लिए मंगलमय है।

इसलिए आप मन में जिन विचारों को महत्त्व देकर आश्रय देते हैं अर्थात् ग्रहण करते हैं या मन से जो भोजन करते हैं उससे घृणा न आये, द्वेष न आये, व्यर्थ की निद्रा-तन्द्रा न आये, विकार न आये इसका आप ध्यान रखिये।

इसलिए केवल मुँह से किया जानेवाला भोजन ही आहार नहीं है अपितु हम अपनी ज्ञानेन्द्रियों से जो ग्रहण करते हैं, वह भी हमारा आहार है, हमारा भोजन है। यदि आप सावधान न रहे तो उससे बड़ा अनिष्ट हो सकता है। आप अपनी ज्ञानेन्द्रियों से ऐसा भोजन करें जिससे आपका अन्तःकरण निर्मल बने।

निर्मल मन जन सो मोहि पावा।
मोहि कपट छल-छिद्र न भावा॥

जो निर्मल है वही परमात्मा से प्यार कर सकता है।

ध्यान की महिमा

※ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ※

कई लोग भगवान की भक्ति करते हैं, अर्चना-आराधना करते हैं, जप-ध्यान करते हैं और परम आस्था के शिखर पर चढ़ना चाहते हैं। वे सोचते हैं कि हम लोभी न हों, क्रोधी न हों, चिंतित न हों, भयभीत न हों, कामनाओं के जाल में न फँसें; फिर भी बेचारे फँस जाते हैं तो क्या करें ?

जब तक भीतर कामनाएँ छुपी हुई हैं तब तक आदमी ऊपर से न चाहे तो भी छुपी हुई इच्छा उभर ही आती है। कई बार आप नहीं चाहते फिर भी काम, क्रोध, लोभ आदि आ ही जाते हैं। आप नहीं चाहते फिर भी अशांति आ जाती है।

कुंडलिनी योग के ज्ञाताओं ने इन छुपे हुए संस्कारों को मिटाने के लिए ध्यान की पद्धति खोजी है। ध्यान करते-करते जब व्यक्ति को ध्यान का रस मिलने लगता है तब छुपे हुए संस्कार, छुपी हुई कामना, छुपी हुई वासना शांत होने लगती है। जितनी इच्छाएँ-कामनाएँ कम होने लगती हैं उतना आत्मा का आनंद आने लगता है। जैसे नाविक नाव को ले जाता है और नाव नाविक को ले भागती है, ऐसे ही आत्मा के रस से इच्छाएँ हटती हैं और इच्छाओं के हटने से आत्मा का रस प्रगट होने लगता है। आत्मसुख में स्थिति होने लगती है।

जहाँ आपको आनंद आता है वहाँ आप स्वाभाविक ही बैठ जाते हो और जहाँ आपको आनंद नहीं आता वहाँ से आप समय होते हुए भी उठ जाते हो।

मानो न मानो यह हकीकत है,
आनंद इंसान की जरूरत है।

ध्यान से परमात्मा का आनंद मिलता है। ध्यान अद्भुत रसायन है। ध्यान में रस और तृप्ति के साथ यात्रा होती है। सारी सृष्टि का उद्गम-स्थान जो परमात्मा है, जो रस और आनंद से भरपूर है उस परमात्मा से एकत्व करा देता है ध्यान।

ध्यान (परमात्म-ध्यान) करनेवाले की सेवा भी सेवक का भाग्य बना देती है तो आप स्वयं ध्यान करें तो कहना ही क्या ! ध्यान से कुसंस्कार स्वाहा हो जाते हैं और अवांछनीय दोषों की निवृत्ति होती है।

जैसे नींद करने से शरीर को आराम मिलता है, वैसे ही ध्यान करने से अंतःकरण में दिव्य चेतना का दिव्य रस आता है, दिव्य आराम मिलता है। ध्यान शरीर के स्वास्थ्य के लिए भी सहायक है और मन, बुद्धि को भी बल देता है।

किंतु यह सब एक दिन में संभव नहीं है। इसके लिए प्रतिदिन अभ्यास करना पड़ता है। प्रभु से प्रतिदिन प्रार्थना करें कि 'हमारे ऐसे दिन कब आयेंगे जब हम भी जीवन्मुक्तों की नाईं जियेंगे... आत्मारामी होकर जियेंगे... हम सदा ईश्वर के साथ हैं, इस बात का संशयरहित ज्ञान हमें कब होगा ?'

ध्यान के क्षणों में...

हे प्रभु ! संतों की कृपा से हम तेरे में डूबने का साहस करते हैं... देनेवाले को अगर रहमत आ जाय तो वह पलभर में भी पार कर सकता है... राजा खट्वांग को एक पल में पार करनेवाला तू ! धन्ना जाट को मिलनेवाला तू ! रविदास चमार को मिलनेवाला तू ! शबरी भीलनी को मिलनेवाला तू ! सहजानंद स्वामी के हृदय में प्रगट होनेवाला तू ! नानक और कबीर के हृदय में छलकनेवाला तू ! प्रभु ! तू कृपा करे तो देर क्या हो सकती है ! तू सहज ही आनंद दे सकता है, हे सच्चिदानंद प्रभु ! हम भी आत्मानंद को उपलब्ध हों, तेरे प्रेम-प्रसाद को पा लें...

संसार के कूड़े-करकट को तो इकट्ठा किया

है... संसार की अहंता-ममता की गठरियाँ तो बाँधी हैं, उस बोझ को हटाने के लिए तेरी कृपा ही काफी है... ॐ... ॐ... ॐ...

यह परमात्मा की नगरी है... इस नगरी में पागल ही प्रवेश कर सकते हैं... चतुर आदमी बाहर ही रह जाता है... जीवन की सार्थकता तभी है जब परमात्मा के लिए पागलपन स्वीकार हो... नानकजी कहते हैं : **बहुतु सिआणप जम का भउ बिआपै...**

बहुत चतुराई इस द्वार पर अड़चन है... यह प्रेम की गली अति सँकरी है। यहाँ या तो तू जा या अहंकार जाय... कन्हैया और कंस एक बार ही मिलते हैं... राम और रावण एक बार ही मिलते हैं। अहंकार और प्रेम सदा नहीं मिला रहता... या तो अहंकार को सँभाल या अपने प्यारे को सँभाल..., चुनना तेरे हाथ में है भैया !

भगवान का प्यारा होकर रुपयों की चिंता करता है ? भगवान का प्यारा होकर प्रतिष्ठा की चिंता करता है ? दूर फेंक दे सब इच्छाओं को... तू डूब जा मीरा की नाईं... खो जा कमाल और कबीर की नाईं... किसी वासना को मत पकड़... किसी अहंकार को मत पकड़... किसी प्रतिष्ठा को मत पकड़... पिघल जा परमात्मा के प्यार में। आप पिघलो औरों को पिघलाओ... आप अमृत पीयो औरों को पिलाओ...

जीवन बड़ा कीमती है... पल-पल बीता जा रहा है... प्रभु की शरण ले ले !

प्रेम न खेतों उपजे प्रेम न हाट बिकाय।
राजा चहों प्रजा चहों शीष दिये ले जाय ॥
जब मैं था तब हरि नहीं अब हरि है मैं नाही।
प्रेम गली अति सँकरी ता में दो न समाहीं ॥

इस प्रेम-गली में दो को प्रवेश नहीं है, अकेला जाना पड़ता है... लोग क्या कहेंगे ? इसकी चिंता भूलनी पड़ती है। बच्चों का क्या होगा ? परिवार का क्या होगा ? अरे ! किसीका कभी कुछ बिगड़ा नहीं है।

हरि ने भजतां हजी कोई नी लाज जतां नथी जाणी रे।
जेनी सुरता शामळिया साथ वदे वेद वाणी रे ॥

ईश्वर के भक्त की लाज जाते अभी तक किसीने देखी नहीं है।

रामनाम के कारणे सब धन दीन्हो खोय।
रामनाम के कारणे सब यश दीन्हो खोय।
मूरख जाने घटि गयो दिन-दिन दूनो होय ॥

अगर दुगना न हो तो भी क्या घाटा है ? जिसके स्वामी श्रीराम हैं उसको क्या चिन्ता ? जिसके स्वामी श्रीकृष्ण हैं उसको क्या चिन्ता ? हो जाओ निश्चिंत... डूब जाओ निश्चिंत नारायणस्वरूप में...

मुर्दे को प्रभु देत है, कपड़ा लकड़ा आग।
जिंदा नर चिंता करे, ताके बड़े अभाग ॥

चिन्ता करनी ही हो तो इस बात की कर कि ध्यान क्यों नहीं लगता ? मुझे ध्यान कब लगेगा ? ...मीरा और चैतन्य महाप्रभु की तरह प्रभु के प्रेम में सराबोर कब होऊँगा ? ...ऐसी चिंता कर, बाकी की सब चिंताएँ वह कर लेगा ! तेरे चिंता करने से कुछ होगा भी नहीं... आज तक क्या हुआ ?

जीवन में जो अत्यंत उपयोगी है, अत्यंत जरूरी है, वह सहज में हो जाता है। तुम्हारे द्वारा चिंता करने से अथवा तुम्हारे करने से सब नहीं होता है... अपने ढंग से सब होता जाता है। कबीरजी ने बड़ी सुंदर बात कही है :

मेरो चिन्त्यो होत नाहीं, हरि को चिन्त्यो होय।
हरि चिन्त्यो हरि करे, मैं रहूँ निश्चिंत ॥

मानव चिंता की गठरी उठा-उठाकर इतना बेहाल हो जाता है कि साथ में हरि है, साथ में अखिल ब्रह्माण्डनायक परमात्मा हृदय में निवास कर रहा है, उसका पता ही नहीं है ! नश्वर जगत को मानव खूब सँभालता है किंतु शाश्वत खजाना जो सदा उसके पास है उसकी याद तक नहीं करता !...

यदि इकट्ठा करना ही हो तो आत्मधन इकट्ठा करो, जिसे पाकर मानव सभी पापों से मुक्त हो जाता है।

महत्त्वपूर्ण निवेदन : सदस्यों के डाक पते में परिवर्तन अगले अंक के बाद के अंक से कार्यान्वित होगा। जो सदस्य ११४वें अंक से अपना पता बदलवाना चाहते हैं, वे कृपया अप्रैल २००२ के अंत तक अपना नया पता भेज दें।

परमात्मस्वरूप सद्गुरु
'अंतर हाथ सहारि दे, बाहर मारे चोट'

❊ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ❊

शिष्य यदि मनमुख रहा और मन के कहने में ही चलता रहा तो वह कभी आगे नहीं बढ़ सकता। उसको गुरुमुख होना ही पड़ेगा लेकिन गुरु भी ऐसे-वैसे नहीं होने चाहिए। गुरु भी समर्थ होने चाहिए जो उसको साधना में श्रेष्ठ मार्ग से आगे बढ़ा सकें। शिष्य की प्रकृति यदि ज्ञानमार्ग की है और गुरु उसको कुण्डलिनी योग ही कराते हैं या शिष्य की प्रकृति कुण्डलिनी योग की है और गुरु उसको ज्ञानयोग में ही घसीटते रहें तो इससे शिष्य का उत्थान नहीं हो पायेगा। इसीलिए कहा है कि गुरु श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ हों और शिष्य में संसार की विषय-वासना भोगने की कामना न हो, ईश्वरप्राप्ति की तीव्र तड़प हो तो काम तुरंत बन जाता है।

ईश्वरप्राप्ति का मार्ग मिटनेवालों का रास्ता है, यह प्रभु के लिए पागल हो जानेवालों का रास्ता है। जो मिटने को तैयार है, जो प्रभु-प्रेम में पागल होने से घबराता नहीं है और लोगों की निन्दा-प्रशंसा-विरोध की परवाह नहीं करता, वही साधक-शिष्य इस रास्ते पर चल सकता है। अन्य लोग तो रास्ते में ही रुक जाते हैं।

बिना अपने अहं को मिटाये तुम आत्मानंद का रसपान नहीं कर सकते। संसार के क्षणिक तुच्छ रस कुछ बनने पर मिल जाते होंगे, यह संभव है परन्तु आत्मानंद का रस तो मिटने से ही मिलता है। संसार के रिश्ते और सम्बन्ध सदैव रहनेवाले नहीं हैं। ये सब शरीर के ही सम्बन्ध हैं किन्तु क्या हम शरीर हैं ? यदि हम शरीर नहीं तो और क्या हैं ? क्या हम मन या बुद्धि हैं ? न हम शरीर हैं, न मन हैं और न बुद्धि हैं तो फिर हम कौन हैं, क्या हैं ? - ये सब साधक की साधना के मौलिक प्रश्न हैं। इनको यदि हल करना है और अपने-आपको जानकर सुख-दुःख, हर्ष-शोक, राग-द्वेष, संशय-द्वन्द्व, कामादिक विकारों से परे आत्मिक आनन्द का अधिकारी बनना है तो इन सांसारिक सम्बन्धों में अधिक नहीं उलझना। जीवन के लिए जितना लौकिक व्यवहार आवश्यक है, उतना व्यवहार करते हुए अपनी साधना को निर्विघ्न अपनी-अपनी जगह पर आगे बढ़ाते जाना है।

जब साधक दृढ़ निश्चय के साथ अपने साधना-पथ पर चल पड़ता है तो विघ्न भी अपने स्थान से चल पड़ते हैं साधक को भुलावा देने के लिए, उसे साधना-पथ से डिगाने के लिए। यहीं पर साधक को सचेत रहने की आवश्यकता है। इस समय ऐसे लोगों से बचें, ऐसे वातावरण से बचें तथा ऐसे आकर्षणों से बचें जो कि प्रत्यक्ष या परोक्ष पतन की ओर ले जा सकते हैं क्योंकि अभी साधना का बीज अंकुर ही बना है, अभी छोटा पौधा ही बन पाया है, अभी पेड़ नहीं बना है। सद्गुरु के प्रति शिष्य की श्रद्धा का धागा बड़ा महीन और नाजुक होता है। उसे सम्हालो, कहीं वह टूट न जाय।

श्रद्धा सदैव एक जैसी नहीं रहती। वह कटती-पिटती-टूटती रहती है। श्रद्धा को सम्हालो, वह बहुत मूल्यवान है। वही तुम्हें नर से नारायण बनानेवाली है। उसीके सहारे तुममें परमात्मा का आनन्द प्रगटनेवाला है। जरा चूके कि... फिसलते चले जाओगे क्योंकि फिसलानेवाले बहुत हैं। पानी ढलान में बहना जानता है लेकिन उसको ऊपर चढ़ाने में बल की जरूरत होती है। साधक को ऊपर चढ़ना है। इसलिए साधक को बहुत सँभल-सँभलकर चलना होगा। जैसे, गर्भिणी स्त्री सँभल-सँभलकर कदम रखती है। स्त्री के उदर से तो नश्वर शरीर का जन्म होगा परन्तु साधक को तो अपने हृदय में शाश्वत परमात्मा का अनुभव पाना है।

कई बार साधक की कसौटियाँ होंगी। गुरु उसे ठोक-बजाकर, तपा-तपाकर आगे बढ़ायेंगे। प्रभु से मिलन यह कोई जैसी-तैसी बात तो है नहीं। यह वह बात है कि जिसके आगे कोई बात

नहीं है। यह वह प्राप्ति है, जिसके आगे कोई प्राप्ति नहीं है। यह वह करना है, जिसके आगे और कुछ करना - कोई कर्त्तव्य शेष ही नहीं बचता। यह वह पद है, जिसके आगे कोई पद नहीं है।

साधक को गीली मिट्टी जैसा बनना पड़ेगा। कुम्हार जैसे मिट्टी को रोंदता, कूटता, पीटता, थपेड़े मारता हुआ घड़ा बनाता है, उसे आग में तपाकर पक्का करता है, वैसे ही गुरु साधक के साथ भी करेंगे। यदि वह (साधक) मिट्टी नहीं बना, गुरुआज्ञा में नहीं चला, उसने मनमानी की, प्रतिकार किया, यदि वह उनकी चोटों से घबरा गया, यदि वह हिम्मत हार गया तो... ! तो फिर वही संसार का नश्वर जीवन, वही जन्म-मृत्यु का चक्कर, वही सदियों पुराना सुख-दुःख का रोग, जिसको छोड़कर वह अमरपद की ओर बढ़ रहा था, उसे अपना लेने के लिए, उसे ग्रस लेने के लिए तैयार खड़ा है। तुम्हारे सामने दोनों विकल्प हैं या तो साधना के मार्ग पर डटकर चलते रहो और अपने आनन्दमय आत्मपद को प्राप्त कर लो अथवा उसी नश्वर सुख की भ्रांतिवाले और दुःखों से भरे विषयी संसार में फिर से फँस जाओ। अब चुनाव तुमको करना है। संसार का मजा भी बिना सजा के नहीं मिलता। जड़ चीजों का सुख भी परिश्रम माँगता है। जो भी मजा चाहते हो उसकी सजा या तो पहले भुगत लो या बाद में। साधक को कठिनाइयाँ पहले भुगतनी पड़ती हैं परन्तु वे कठिनाइयाँ उसे महाआनन्द की ओर ले जाती हैं। आज तक हमने संसार में जो भी मजा लिया या सुख लिया वह तो हर्ष था सुख नहीं। हर्ष तो मन का विकार है। हर्ष आता है और चला जाता है। हर्ष परम सुख नहीं है। परम सुख आता-जाता नहीं, वह तो शाश्वत सुख है।

साधक का लक्ष्य होता है परम सुख पाना। हमने विवेकपूर्वक परम सुख का मार्ग पकड़ा है, जो हमें नश्वर से शाश्वत की ओर ले जायेगा। यही सच्चा पथ है। बाकी सारे पथ माया में ले जाते हैं किन्तु यह पथ माया से पार ले जाता है, जहाँ मान-अपमान, रोग, मोह, सुख-दुःख आदि की पहुँच नहीं है। इसी पथ पर हमें दृढ़तापूर्वक चलना है, चलते ही रहना है, बिना रुके, जब तक कि लक्ष्य की सिद्धि न हो जाय।

✻ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✻

सत्यं ब्रूयात्...

सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात् न ब्रूयात् असत्यमप्रियम्।

सत्य बोलो, प्रिय बोलो किन्तु अप्रिय (अकल्याणकारी), असत्य मत बोलो।

जो व्यक्ति झूठ बोलता है, उसकी वाणी का प्रभाव कम हो जाता है, उसके दिल की धड़कनें बढ़ जाती हैं और जो सत्य बोलता है, मधुर बोलता है, उसकी हिम्मत बढ़ जाती है। जो किसीकी निंदा करता है, चुगली करता है उसको डर लगता है कि कहीं मेरी बात खुल न जाय ! जो निंदा नहीं करता, चुगली नहीं करता, उसको डर भी नहीं रहता। वह निर्भय रहता है, निश्चिन्त रहता है। अतः, सदैव ऐसा ही बोलें जो सत्य हो, प्रिय हो और हितकर हो।

बादशाह अकबर के नौ रत्नों में एक रत्न बनारसीदास भी थे। वे सदैव सत्य ही बोला करते थे।

एक दिन अकबर ने सोचा कि : 'आज बनारसीदास को झूठ बोलनेवाला साबित करना है।' उसने एक जीवित पक्षी लिया और उसे कपड़े से ढाँककर ले गया राजदरबार में। वहाँ अकबर ने बनारसीदास से पूछा :

''यह पक्षी जिंदा है कि मरा हुआ ?''

बनारसीदास अकबर की चाल समझ गये कि 'आज बादशाह मुझे झूठा साबित करना चाहते हैं। यदि मैं कहूँगा कि पक्षी जिंदा है तो उसकी गरदन दबोच देंगे और अगर कहूँगा कि पक्षी मरा हुआ है तो उसे जीवित उड़ा देंगे।'

सत्य तो बोलना चाहिए परन्तु सत्य से

किसीकी हानि न होती हो, किसीके साथ अन्याय न होता हो ऐसा सत्य बोलना चाहिए। यह सोचकर बनारसीदास ने कहा :

''जहाँपनाह ! यह पक्षी तो मर गया है फिर भी आप चाहें तो उसे जीवित कर सकते हैं।''

अकबर उनका उत्तर सुनकर आश्चर्यचकित हो उठा और उसने उस पक्षी को उड़ा दिया। फिर बनारसीदास से कहा :

''तुमने सत्य भी कहा और झूठ भी। ऐसा क्यों?''

बनारसीदास : ''जहाँपनाह ! यदि मैं कहता कि पक्षी जीवित है तो आप उसकी गरदन दबा देते और अगर मैं कहता कि पक्षी मर गया है तो आप उसे जीवित निकाल देते। मैं सत्य बोलता कि पक्षी जीवित है तो एक निर्दोष पक्षी की हत्या हो जाती इसलिए एक निर्दोष पक्षी की जान बचाने के लिए मुझे झूठ बोलना पड़ा तो कोई हर्ज नहीं है।''

वचन सत्य तो हो किन्तु उस सत्य से किसीकी हिंसा न हो, किसीका अहित न हो यह भी ध्यान में रखना चाहिए।

सत्य बोलो, प्रिय बोलो और हितकर बोलो। कभी-कभी हितकर बोलने में वाणी की प्रियता और सत्यता कम भी होती है। जैसे, माँ बच्चे को बोलती है : 'दवा पी ले... मीठी है।' यहाँ 'दवा मीठी है' यह बात सरासर झूठ है लेकिन माँ का प्रयोजन हितकर है इसलिए झूठ बोलती है। बालक नहीं पीता है तो डाँटती भी है। यह डाँट अप्रिय है किन्तु हितकर है। माँ झूठ भी बोलती है, अप्रिय भी बोलती है परन्तु उसके मूल में बालक के हित की भावना है। अतः, उसे झूठ बोलने का पाप नहीं लगता।

*

झूठ बोलने की आदत

एक आदमी को झूठ बोलने की आदत थी परन्तु उसे अपना उद्धार करने की भी बड़ी चिंता थी। अतः वह एक महात्मा के पास गया और बोला :

''महाराज ! मैंने मंत्रदीक्षा ली है, मंत्रजप भी करता हूँ लेकिन मुझे झूठ बोलने की आदत है। मैं झूठ बोलना नहीं छोड़ सकता। महाराज ! आप बोलें तो मैं घर छोड़ दूँ, आप बोलें तो मैं एक वक्त का भोजन छोड़ दूँ परन्तु झूठ नहीं छोड़ सकता। आप मेरे उद्धार का कोई उपाय बताइये।''

महात्मा ने देखा कि बंदा भले झूठ बोलने की आदतवाला है लेकिन है तो ईमानदार ! एक गुण भी गुरु के सामने आ जाय तो अन्य सभी दुर्गुणों से उबारने की युक्ति गुरुलोग जानते हैं। महाराज ने कहा :

''ठीक है। तू जितना झूठ बोलता है उससे दुगना बोल किन्तु मेरी एक बात मान।''

व्यक्ति : ''महाराज ! एक क्या दस मानूँगा, केवल झूठ बोलना नहीं छोड़ सकता।''

महाराज : ''मैं तुझसे झूठ नहीं छुड़वा रहा हूँ। तू ऐसा कर कि जितना भी झूठ बोलना हो, गप्प लगानी हो सब सियाराम के आगे लगा। युगल सरकार सियाराम सिंहासन पर बैठे हैं उनको साक्षात् मानते हुए उनके आगे झूठी गप्प लगाकर उनका मनोरंजन कर। तुम्हारे गप्पमय मनोरंजन से वे मंद-मंद मुस्करा रहे हैं, प्रसन्नता व्यक्त कर रहे हैं। उनकी प्रसन्नता देखकर तुम प्रसन्न होते जाओ कि प्रभु मेरी सेवा से प्रसन्न हो रहे हैं।''

उस आदमी ने आज्ञा शिरोधार्य की और भगवान सियाराम को झूठ-मूठ की बातें सुनाने लगा। किसीको झूठ सुनाओ तो वह रोके-टोके भी कि झूठ बोलता है, किन्तु सियाराम तो सदा मुस्कराते मिलेंगे।

थोड़े दिन बीते। वह पुनः उन महात्मा के पास गया एवं बोला :

''महाराज ! आपने जो युक्ति बताई उसमें बड़ा आनंद आ रहा है।''

महात्मा : ''देख, तू इतनी-इतनी गप्पें लगाता है फिर भी भगवान तुझ पर राजी हैं। रोज तेरी गप्पें सुने जा रहे हैं।''

व्यक्ति : ''महाराज ! मुझे भी बड़ा मजा आता है।''

महात्मा : ''तू गपशप करता है तब भी इतना मजा आता है, सच बोले तो कितना मजा

आये ?''

व्यक्ति : ''नहीं, महाराज ! यह बात मत करो। मैं तो झूठ बोलूँगा, इसके बिना नहीं चलेगा।''

महात्मा : ''अच्छा, ठीक है। परंतु झूठ बोलते हुए भी ऐसा मत बोल कि 'मैं झूठ बोल रहा हूँ...' यह भी तो सच हो गया ! झूठ भले बोल पर सोच कि झूठ बोलनेवाली जीभ है, झूठ सोचनेवाला मन है, झूठा निर्णय करनेवाली बुद्धि है। तू तो भगवान का सखा है, सखा !''

व्यक्ति : ''हाँ, महाराज !''

महात्मा : ''तू भगवान से जरा भी कम नहीं है।''

व्यक्ति : ''हाँ, महाराज ! ऐसा तो मैं कर सकता हूँ।''

गहराई में तो सभी भगवद्स्वरूप हैं किन्तु अपने को जानते नहीं हैं। बाबाजी ने बता दी युक्ति।

भगवान के सामने गप्पें लगाते-लगाते उस आदमी का मन ऐसा भगवदाकार हो गया कि झूठ चला गया, भगवान ही उसके दिल में रह गये। अंतर-शांति, अंतर-आराम, अंतर-प्रकाश से सूझबूझ बढ़ी। आप भी अपने क्रियाकलाप में भगवद्प्रसन्नता व भगवद्शांति ले आओ।

*

राष्ट्रपति भवन में झाड़ू

अमेरिका में राष्ट्रपति के रूप में आइजन हॉवर को चुना गया। टेलीफोन और तार से लोगों की बधाइयाँ मिलने लगीं और राष्ट्रपति भवन में उपहारों का ढेर लग गया। आइजन हॉवर ने सबकी सौगातें (उपहार) स्वीकार की। सौगात के रूप में एक झाड़ू भी मिली और साथ में एक लिफाफा भी था।

आइजन हॉवर ने सारी कीमती सौगातें सरकारी भंडारगृह में जमा करवा दी परन्तु झाड़ू को अपने कार्यालय में रखवा दिया। जो भी व्यक्ति राष्ट्रपति से मिलने आता उसकी नजर उस झाड़ू पर अवश्य पड़ती थी। किंतु झाड़ू को कार्यालय में क्यों रखा है यह पूछने की हिम्मत कोई नहीं कर पाता था।

एक बार किसी अन्य देश के राष्ट्रपति अमेरिका के अतिथि हुए। वे अपने मंत्रियों के साथ राष्ट्रपति के कार्यालय में बैठे हुए थे। विदेश के राष्ट्रपति और उनके मंत्रियों की नजर बार-बार उस झाड़ू पर जा रही थी। उनकी मनोदशा को भाँपते हुए आइजन हॉवर ने मुस्कराते हुए कहा :

''आप लोग इस झाड़ू को देखते हो फिर मेरी ओर देखकर कुछ सोचते हो। आपकी आँखों से ऐसा लग रहा है कि आपके मन में प्रश्न उठ रहे हैं कि राष्ट्रपति भवन के कार्यालय के 'शोकेस' में झाड़ू ? मैं इसकी कथा आप लोगों को सुनाता हूँ :

मैं जब राष्ट्रपति चुनकर आया तब लोगों ने बहुत सारी सौगातें भेजी। उनमें यह झाड़ू भी सौगात के रूप में आयी और इसके साथ एक चिट्ठी भी थी, जिसमें लिखा है :

'आप चुनाव के दिनों में ढिंढ़ोरा पीटते थे कि मैं भ्रष्टाचार और गंदगी को साफ करूँगा। इसलिए आपको भेंट में मैं एक झाड़ू भेज रहा हूँ ताकि आपको सफाई करने की स्मृति बनी रहे। प्रजा को दिया हुआ वचन पालने की याद बनी रहे।'

मुझे और सौगातों ने इतना प्रभावित नहीं किया जितना इस झाड़ू ने किया। इस झाड़ू भेजनेवाले ने मुझे सचेत कर दिया। इसीलिए मैंने इसे ऐसी जगह पर रखा जहाँ मेरी रोज नजर जाती है। मैं सफाई का काम करने का रोज प्रयत्न करता हूँ और कुछ सफाई हो भी रही है।''

प्रजा में से किसी व्यक्ति ने झाड़ू भेजा और आइजन हॉवर ने उसे अपने कार्यालय में रख दिया। मैं तुम्हें झाड़ू तो नहीं देता परन्तु तुम्हारे सामने हरिनाम कथा रखता हूँ ताकि तुम भी उससे प्रतिदिन अपने दिल को साफ करके दिलबर का आनंद उभार सको, दिलबर के माधुर्य को पा सको। दिलबर की शांति में डूब सको।

जो वासना से है बँधा, सो मूढ़ बंधन युक्त है।
निर्वासना जो हो गया, सो धीर योगी मुक्त है ।।
भव वासना है बाँधती, शिव वासना है छोड़ती।
सब बंधनों को तोड़कर, शिव शांति से है जोड़ती ।।

संत-दर्शन की चाह

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

उड़ीसा के राजा प्रतापरुद्र बड़े धार्मिक एवं साधुसेवी थे। उनका बाहरी वेश तो राजसी था परन्तु भीतर से उनका रोम-रोम भक्ति-भाव से परिपूर्ण था।

वे गौरांग (चैतन्य महाप्रभु) के दर्शन करना चाहते थे लेकिन गौरांग ने उनकी बात ठुकरा दी। राजा ने खूब प्रयत्न किये परन्तु गौरांग नहीं माने। आखिर पुण्यात्मा, धनभागी राजा प्रतापरुद्र ने ठान लिया कि 'कुछ भी हो, मैं इन महापुरुष की कृपा को पाकर ही रहूँगा। इसके लिए चाहे कुछ भी क्यों न करना पड़े ?'

गौरांग के शिष्यों में पण्डित नाम से प्रसिद्ध एक शिष्य थे। राजा प्रतापरुद्र ने उनको प्रसन्न करके उनके हाथों गौरांग के पास एक प्रार्थनापत्र भेजा : 'मैं तो आपके चरणों की धूलि हूँ और आपके चरणों में सिर झुकाना चाहता हूँ। मेरा जीवन यूँ ही बीता जा रहा है। यह कटक का राज्य तो पहले भी मेरा नहीं था और बाद में भी मेरा नहीं रहेगा। मैं आपकी शरण में हूँ। मैं आपका दास हूँ। आपको जब भी, जैसे भी अनुकूल पड़े मेरे यहाँ पधारने की कृपा करें और इस दास की पूजा की जगह को पावन करने की कृपा करें।'

पंडित समय-समय पर गौरांग के पास जाया करते थे। राजा का प्रार्थनापत्र लेकर वे गौरांग के पास गये। उन्हें देखकर गौरांग ने कहा :

''अरे, तुम आज अचानक कैसे ?''

पंडित : ''प्रभु ! आज तो दास आपसे कुछ माँगने आया है।''

गौरांग : ''तुमको भी माँगने की जरूरत पड़ी ? क्या माँगते हो ?''

पंडित : ''आप मेरी प्रार्थना स्वीकार करना, अस्वीकार मत करना।''

गौरांग : ''पंडितजी ! पहले से ही वचनबद्ध क्यों करते हो ? तुम ऐसा कुछ तो बोलोगे नहीं जो मुझे अस्वीकार करना पड़े ? क्या माँगना चाहते हो ? अच्छे लोग अपनी बात मनवाने का आग्रह नहीं रखते वरन् संत की बात मानते हैं। तुम क्या चाहते हो ?''

पंडित : ''राजा प्रतापरुद्र भगवान के बड़े भक्त हैं और आपके दर्शन के लिए तरसते हैं। दिखते हैं राजा लेकिन हैं संतसेवी। बड़ी सेवा करते हैं भगवान जगन्नाथ एवं संतों की। वे आपका स्वागत करना चाहते हैं, आप उनके यहाँ पधारने की कृपा करें।''

गौरांग ने तुरंत कान में उँगलियाँ डालते हुए कहा : ''अरररररर... मेरा कौन-सा पाप है कि मैं राजा के आमंत्रण की बात सुन रहा हूँ ? जिसको ईश्वरीय मस्ती चाहिए वह राजा के आमंत्रण को कैसे स्वीकार कर सकता है ? रजोगुणी वातावरण में जाने का आमंत्रण ? प्रजा से कर लेकर राजवैभव प्राप्त होता है, उस वैभव में जीनेवाले का आमंत्रण ? राम, राम, राम... यह तुम कैसी प्रार्थना लेकर आये हो ?''

पंडित ने काफी अनुनय-विनय किया किन्तु गौरांग ने आमंत्रण स्वीकार नहीं किया।

पंडित ने यह बात राजा प्रतापरुद्र को बता दी। प्रतापरुद्र ने पण्डित से कहा :

''कैसे भी करके मैं उनकी कृपा पाना चाहता हूँ।''

पंडित ने राजा की तीव्र इच्छा एवं दृढ़ता देखकर कहा :

''राजन् ! परसों जगन्नाथजी की रथयात्रा है। लाखों लोग जगन्नाथजी का रथ खींचेंगे। गौरांग भी वहाँ जायेंगे। जब वे रथ को धक्का मारेंगे तभी यात्रा शुरू होगी। उसके बाद दोपहर में वे अमुक बगीचे में विश्राम करेंगे। अगर आप उनकी कृपा पाना ही चाहते हैं तो आपको एक सेवक का, एक हरि-भक्त का वेश बनाकर वहाँ जाना पड़ेगा। आप राजा के वेश में

नहीं, सेवक के वेश में जाकर वहाँ सेवा-टहल करना। अगर उनकी दृष्टि पड़ेगी और आपकी सेवा स्वीकार हो जायेगी तो आपका काम बन जायेगा। आप तो बड़े बुद्धिमान राजा हैं। मैंने आपको समय व स्थान बता दिया है।''

प्रतापरुद्र ने रथयात्रा के दिन एक सामान्य भक्त का वेश धारण किया और उस बगीचे में पहुँचे जहाँ गौरांग अपने भक्तों के साथ विश्राम कर रहे थे। दोपहर का समय था, रथयात्रा के श्रम से थके होने के कारण गौरांग लेटे हुए थे। राजा ने जाकर सभी भक्तों को दंडवत् प्रणाम किया। कोई भी पहचान न पाया कि ये स्वयं राजा प्रतापरुद्र हैं। सबके हृदय में हुआ कि यह भक्त कितना नम्र है ! सबके हृदय में उनके प्रति सहानुभूति जाग उठी।

ऐसा करते-करते प्रतापरुद्र गौरांग प्रभु के नजदीक गये एवं देखा कि वे बड़े थके हैं, अतः धीरे-धीरे उनके चरण सहलाने लगे।

गौरांग को थोड़ा आराम का एहसास हुआ। प्रतापरुद्र राजा थे, चरणचंपी करवा चुके थे। इसलिए उनको तो पता था कि कैसी चरणचंपी करने से नींद अच्छी आती है और थकान मिटती है।

ऐसा करते-करते काफी देर हो गयी। राजा ने देखा कि अब गौरांग प्रभु आराम कर चुके हैं। अतः, वे चरण सहलाते-सहलाते 'श्रीमद्भागवत' का 'गोपी गीत' मधुर स्वर से गुनगुनाने लगे :

'भगवान कृष्ण ! आप कहाँ गये ? हे केशव! आप हमें छोड़कर कहाँ चले गये ? हमारे साथ होते हुए भी आप कहाँ अदृश्य हो गये ? कोई तो बता दे मेरे कृष्ण का पता...' राजा प्रतापरुद्र बड़े ही भावपूर्ण हृदय से भागवत के 'गोपी गीत' का गायन कर रहे थे।

गौरांग नींद से उठे। उठते ही इतने मधुर स्वर एवं भावपूर्ण हृदय से गाये जा रहे 'गोपी गीत' सुनकर उनका हृदय भी पिघलता गया। जैसे वेदान्त की सारगर्भित बात सुनकर वेदान्ती का हृदय छलकता है, वैसे ही 'गोपी गीत' सुनकर गौरांग का हृदय छलक उठा। उन्होंने कहा : ''फिर से गाओ, जरा फिर से।''

गौरांग की प्रसन्नता देखकर राजा पुलकित होकर फिर से गाने लगे। ऐसा करते-करते गौरांग का हृदय ऐसा छलका कि वे उठ बैठे और बोले :

''तुम कौन हो ? कहाँ से आये हो ? तुम्हारा यह गीत सुनकर मेरी सारी थकान मिट गयी।''

शरीर की थकान नींद से इतनी नहीं मिटती जितनी मन की प्रसन्नता से मिटती है। तीन घंटे आप सोओ और २१ घंटे काम करो यह संभव है। किंतु मन में यह नहीं होना चाहिए कि 'मैंने बहुत काम कर लिया, मैं बहुत थक गया हूँ।' अगर ऐसा सोचते हैं कि 'मैंने बहुत काम कर लिया... मैं बहुत थक गया हूँ...' तो शारीरिक तनाव होता है। शारीरिक और मानसिक तनाव से संयुक्त होने पर ही मन फिर सिगरेट, सुरा, सुंदरी आदि की खोज करता है।

शारीरिक एवं मानसिक तनाव दूर करने के लिए सुंदर उपाय है - अजपा गायत्री। शरीर को खूब खींचें फिर ढीला छोड़ दें। मन-ही-मन चिंतन करें कि 'मैं स्वस्थ हूँ... शरीर की थकान मिट रही है...' इस प्रकार शारीरिक आराम लेकर फिर श्वासोच्छ्वास की गिनती करें। इससे शारीरिक एवं मानसिक तनाव मिटेंगे।

प्रतापरुद्र ने कहा : ''भगवन् ! मैं उड़ीसा का हूँ। आपके दासों का दास हूँ।''

गौरांग : ''अरे, भैया ! आज तो तुमने मुझे ऋणी बना दिया। कृष्ण का 'गोपी गीत' तुमने कितना सुंदर गाया ! कितनी शांति दी ! तुम क्या चाहते हो ?''

प्रतापरुद्र : ''महाराज ! केवल आपकी कृपा चाहता हूँ।''

ऐसा करते- करते गौरांग की कृपा पा ली राजा प्रतापरुद्र ने।

संत की कृपा पाने के लिए राजा प्रतापरुद्र ने कितने प्रयत्न किये... आखिर अपना राजवेश छोड़कर एक सामान्य भक्त का वेश बनाया... लगन और दृढ़ता थी संत-दर्शन की तो दर्शन पाकर ही रहे।

सचमुच में वे बड़े भाग्यशाली हैं जो संत-दर्शन की महत्ता जानते हैं और संत की कृपा को पाने के अधिकारी बन पाते हैं।

*

ऐतरेय ऋषि की ज्ञाननिष्ठा

✻ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✻

इतरा माता के पुत्र बालक ऐतरेय को पूर्वजन्म में जो गुरुमंत्र मिला था, उसका वह बाल्यकाल से ही जप करता था। वह न तो किसीकी बात सुनता था, न स्वयं कुछ बोलता था। न अन्य बालकों की तरह खेलता ही था और न ही अध्ययन करता था।

आखिर लोगों ने कहा : ''यह तो मूर्ख है। कुछ बोलता ही नहीं है।''

गुरुवाणी में कहा गया है :

बहुतु सिआणप जम का भउ बिआपै।

जगत में ज्यादा चतुर न बनो। बहुत चतुराई करोगे तो यम का भय व्याप्त हो जायेगा, जगत का आकर्षण व्याप्त हो जायेगा। जगत के लोग अपना उल्लू सीधा करने के लिए तुम्हारा समय और शक्ति खींच लेंगे। पत्नी तुमसे तब प्रेम करती है जब उसे तुमसे सुख मिलता है, पति भी पत्नी से तब प्रेम करता है जब उसे पत्नी से सुख मिलता है। सेठ नौकर से प्रेम करता है क्योंकि वह उसका काम करता है और नौकर भी सेठ को इसीलिए चाहता है कि सेठ उसे पैसे देता है। सारा संसार केवल स्वार्थ से बँधा है।

जगत के लोग तुम्हें प्रेम करेंगे, तुम्हारी वाहवाही करेंगे तुम्हारा शोषण करने के लिए और सद्गुरु एवं भगवान तुम्हें प्रेम करेंगे तुम्हारा पोषण करने के लिए।

एक दिन माँ ने दुःखी होकर ऐतरेय से कहा : ''माता-पिता तब खुश होते हैं जब उनके बेटे-बेटी का यश होता है। तेरी तो निंदा हो रही है। संसार में उस नारी का जन्म निश्चय ही व्यर्थ है जो पति के द्वा[रा] तिरस्कृत हो और जिसका पुत्र गुणवान न हो।''

तब ऐतरेय हँस पड़े एवं माता के चरणों में प्रण[ाम] करके बोले : ''माँ ! तुम झूठे मोह में पड़ी हुई हो[,] अज्ञान को ही ज्ञान मान बैठी हो। निंदा और स्तु[ति] संसार के लोग अपनी-अपनी दृष्टि से करते हैं[।] निंदा करते हैं तो किसकी करते हैं ? जिसमें कु[छ] खड़ी हड्डियाँ हैं, कुछ आड़ी हड्डियाँ हैं और थो[ड़ा] मांस है जो रगों से बँधा है, उस निंदनीय शरीर क[ी] निंदा करते हैं। इस निंदनीय शरीर की निंदा हो चा[हे] स्तुति, क्या फर्क पड़ता है ? मैं निंदनीय कर्म त[ो] कर नहीं रहा, केवल जान-बूझकर मैंने मूर्ख क[ा] स्वाँग किया है।

यह संसार स्वार्थ से भरा है। निःस्वार्थ त[ो] केवल एक भगवान हैं और भगवत्प्राप्त महापुरु[ष] हैं। इसीलिए माँ ! मैं तो भगवान के नाम का जप क[र] रहा हूँ और मेरे हृदय में भगवत्शांति है, भगवत्सुख है। मेरी निंदा सुनकर तू दुःखी मत हो।

माँ ! ऐसा कभी नहीं सोचना चाहिए जिससे मन में दुःख हो, बुद्धि में द्वेष हो और चित्त में संसार का आकर्षण हो। संसार का चिंतन करने से जीव बंधन में पड़ता है और चैतन्यस्वरूप परमात्मा का चिंतन करने से जीव मुक्त हो जाता है।

वास्तव में मैं यह शरीर नहीं हूँ और माँ ! तुम भी यह शरीर नहीं हो। यह शरीर तो कई बार पैदा हुआ और कई बार मर गया। शरीर को 'मैं' मानने से, शरीर के साथ सम्बन्धित वस्तुओं को 'मेरा' मानने से ही यह जीव बंधन में फँसता है। आत्मा को 'मैं' मानने से और परमात्मा को 'मेरा' मानने से जीव मुक्त हो जाता है।

माँ ! ऐसा चिंतन-मनन करके तू भी मुक्तात्मा बन जा। अपनी मान्यता बदल दे। मान्यता के कारण ही जीव बंधन का शिकार होता है। अगर वह मान्यता को छोड़ दे तो जीवात्मा परमात्मा का सनातन-स्वरूप है ही।

माँ ! जीवन की शाम हो जाय उसके पहले जीवनदाता का ज्ञान पा ले। आँखों की देखने की शक्ति क्षीण हो जाय उसके पहले जिससे देखा जाता

है उसे देखने का अभ्यास कर ले, माँ ! कान सुनने से इन्कार कर दें, उसके पहले जिससे सुना जाता है उसमें शांत होती जा... यही जीवन का सार है माँ !''

इतरा ने देखा कि बेटा लगता तो मूर्ख जैसा है किन्तु बड़े-बड़े तपस्वियों से भी ऊँचे अनुभव की बात करता है। माँ को बड़ा संतोष हुआ।

यही बालक ऐतरेय आगे चलकर ऐतरेय ऋषि बन गये। ऋग्वेद के 'ऐतरेय उपनिषद्' के रचयिता यही ऐतरेय ऋषि हैं।

जो औरों को डाले चक्कर में,
वो खुद भी चक्कर खाता है ।
औरों को देता शक्कर है,
वो खुद भी शक्कर खाता है ॥

यह संसार का नियम है कि जैसी ध्वनि वैसी ही प्रतिध्वनि होती है। आप जैसा फेंकते हैं वैसा ही घूम-फिरकर आपके पास वापस आता है। आप अपमानयुक्त बोलेंगे तो आपका भी अपमान होने लगेगा। आप दूसरों का शोषण करेंगे तो आपका भी शोषण होने लगेगा। दूसरों का भला सोचेंगे तो आपका भी भला होने लगेगा और दूसरों का बुरा सोचेंगे तो आपका भी बुरा होने लगेगा। दूसरों के लिए पवित्र बात सोचिये, मंगल सोचिये फिर भले ही आप दूसरों का मंगल कर सकें या न कर सकें लेकिन जिस अन्तःकरण में मंगल सोचा जाता है उस अंतःकरण का मंगल तो सोचने के समय से ही होने लगता है। दूसरे का बुरा सोचिये और आपके सोचने से उसका बुरा चाहे हो या न हो लेकिन बुरा सोचने से आपका अन्तःकरण तो उसी समय से बुरा होने लगता है। यह कर्म का विधान है। दीक्षा और धर्म आदमी को सावधान करते हैं कि चौरासी-चौरासी लाख जन्मों में भटकने की दुर्वासना भी तेरे पास है, और इन जन्मों के कर्मों को काटने की कैंची 'मति' भी तेरे पास है, अब तू निर्बन्ध हो अथवा उसी कैंची से अपने हाथ काट, पैर काट... तेरी मर्जी।

(आश्रम की पुस्तक 'सत्संग सुमन' से)

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

जन्म-कर्म की दिव्यता

[पूज्य बापूजी का ६१वाँ जन्मोत्सव : २ मई २००२]

'श्रीमद्भगवद्गीता' में आया है :

जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्त्वतः ।
त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन ॥

'हे अर्जुन ! मेरे जन्म और कर्म दिव्य अर्थात् निर्मल और अलौकिक हैं, इसे जो मनुष्य तत्त्व से जान लेता है, वह शरीर को त्यागकर फिर जन्म को प्राप्त नहीं होता, किंतु मुझे ही प्राप्त होता है।'

(गीता : ४.९)

भगवान कहते हैं : **जन्म कर्म च मे दिव्यं...** मेरे जन्म और कर्म दिव्य हैं।

'भगवान के जन्म और कर्म दिव्य हैं' - ऐसा अगर हम भी मान लें तो हमारा कल्याण आसानी से हो सकता है।

हमारे शरीर के द्वारा जो कर्म होते हैं, उनके मूल में यदि अहंकार और वासना होती है तो वे बंधनवाले हो जाते हैं। अगर हम अपने निर्बंध नारायण-आत्मतत्त्व को पहचान लें अथवा मान लें तो कल्याण हो जाय।

मानेंगे तब पहचानेंगे। बच्चा पहले मानता है, 'पृथ्वी गोल है।' आगे चलकर पहचानता है कि पृथ्वी गोल कैसे है ? ऐसे ही वे लोग सचमुच में भाग्यशाली हैं जो अपने इस पंचभौतिक शरीर में होते हुए भी शरीर की सत्यता नहीं मानते वरन् अपनी आत्मा की सत्यता मानते हैं, अपने परमात्मा की सत्यता मानते हैं।

यदि आत्मा की सत्यता मानने लग गये तो शरीर का अहंकार नहीं होगा। मैं अमर आत्मा हूँ ऐसा **'अहं ब्रह्मास्मि'** का सद्भाव आयेगा। यदि आत्मा को नहीं मानेंगे और नश्वर शरीर की सत्यता को ही मानेंगे तो अपने में जाति का, देह का, वर्ण विशेष का अहंकार आने लगेगा और उसीसे सारे कर्म तुच्छ होने लगेंगे।

कर्त्ता जब विकारों से प्रेरित होकर कर्म करता है तब कर्म बंधनवाला हो जाता है और निर्विकार नारायणस्वरूप आत्मा में स्थिति करके अथवा आत्मा-परमात्मा में अपनी प्रीति करके कर्म करता है तब कर्म दिव्य हो जाते हैं।

जन्मदिवस उत्सव मनाने का एक सुंदर अवसर है और सबको मनाना चाहिए परन्तु मेरा या आपका ही जन्मदिवस नहीं होता। आज के दिन धरती पर करीब डेढ़ करोड़ लोगों का जन्मदिन है, कल भी होगा क्योंकि धरती पर ५०० करोड़ लोग हैं। रोज के १.५ करोड़ गिन लो।

शरीर का जन्म होना बड़ी बात नहीं है बल्कि शरीर के जन्म का उद्देश्य पूर्ण कर लेना - यह बहुत बड़ी बात है।

जहाँ में उसने बड़ी बात कर ली।
जिसने अपने आपसे मुलाकात कर ली॥

श्रीकृष्ण ने अपने-आपसे मुलाकात कर ली थी इसीलिए श्रीकृष्ण के सभी कर्म दिव्य माने गये हैं। देखो, इतने महान श्रीकृष्ण छछियनभरी छाछ के लिए नाचते हैं, पर निंदा के पात्र नहीं होते क्योंकि वे कर्त्ताभाव से उपर उठे हुए हैं। उनका नाचना अपने लिए नहीं, औरों के सुख के लिए है। उनका युद्ध में संधिदूत होकर जाना अथवा घोड़ागाड़ी चलाना भी अपने लिए नहीं बल्कि औरों के लिए है। जिन्होंने अपनी आत्मा में विश्रांति पायी है, वे सुखी होने के लिए विषय-विकारों की गुलामी नहीं करते अपितु अपने आत्मानंद में तृप्त रहते हैं और आत्मिक सुख बाँटते रहते हैं। सुख बाँटने के उनके जो भी कर्म हैं वे सारे दिव्य हैं। सुख लेने के लिए वासना और ठगी करनी पड़ती है, सुख देने में ठगी क्यों करेंगे ? वासना कहाँ से लायेंगे ?

माँ आनंदमयी का ६४वाँ जन्मदि[न] अमदावाद के भुलाभाई पार्क में मनाया जा रहा थ[ा।] भक्त बड़े प्रेम और उल्लास से जन्मदिन मना[रहे] थे। माँ आनंदमयी ने भक्तों से कहा :

''आप जो पूछोगे मैं जवाब दूँगी।''

एक भक्त ने पूछा :

''माँ ! जबसे आपका जन्म हुआ तबसे ले[कर] आज के जन्मदिवस तक जो-जो अनुभूतियाँ [हुईं] उनका वर्णन करने की कृपा करें।''

अन्य भक्तों को यह प्रश्न सुनकर बड़ा आन[ंद] आया कि 'जिन्होंने आत्मा को 'मैं' रूप से जाना [है] उन माँ आनंदमयी जैसी देवी की आत्मा को छूक[र] आनेवाली वाणी को सुनने का लाभ आज घं[टों] तक मिलेगा।'

मन को एकाग्र करने के लिए संत-वचन सुन[ने] जैसा और कोई सुगम, श्रेष्ठ और पवित्र साधन नह[ीं] है। अपने-आप मन को एकाग्र करने में बहुत मेहनत पड़ती है परन्तु जब संत आत्मा-परमात्मा को छूक[र] बोलते हैं तब उनकी वाणी सुनते-सुनते अनायास ही मन सात्त्विक होने लगता है, शुद्ध होने लगता है, एकाग्र होने लगता है, ज्ञानसंपन्न एवं प्रसन्न होने लगता है और परमात्मा में लगने लगता है। इसीलिए सत्संग की बड़ी भारी महिमा गायी गयी है।

इंदिरा गाँधी की गुरु माँ आनंदमयी ने प्रश्न के जवाब में कहा :

''मेरा कभी जन्म ही नहीं हुआ। जिसका जन्म हुआ है वह है यह शरीर और मैं शरीर नहीं हूँ।''

जो परमात्मा का अनुभव है वही परमात्मा को पाये हुए का अनुभव हो जाता है। भगवान कहते हैं :

'हे अर्जुन ! मेरे जन्म और कर्म दिव्य अर्थात् निर्मल और अलौकिक हैं - ऐसा जो मनुष्य तत्त्व से जान लेता है, वह शरीर को त्यागकर फिर जन्म को प्राप्त नहीं होता, किंतु मुझे ही प्राप्त होता है।'

भगवत्कथा सुनने से, भगवत्स्मरण करने से, भगवद्ज्ञान पाने से आपके चित्त में भगवद्भाव प्रकट होगा और भगवद्भाव से प्रेरित होकर आप जो भी कर्म करेंगे वे सब कर्म दिव्य होने लगेंगे।

योग से कर्मों में दिव्यता आती है। इसीलिए

महर्षि दयानंदजी कहते थे : 'हर रोज गृहस्थ व्यक्ति को कम-से-कम दो घंटे ध्यान करना ही चाहिए । साधु या साधक को कम-से-कम चार घण्टे ध्यान करना चाहिए ।' इससे पुराने कर्मों की वासना मिट जायेगी और नये कर्म कर्त्ताभाव के अहंकार से नहीं करोगे तो नये कर्म बाँधनेवाले नहीं होंगे । जो नये कर्म होंगे वे यदि लोगों के हित के लिए होंगे, लोगों के मंगल के लिए होंगे, लोगों के हृदय में भगवद्‌रस पैदा करने के लिए होंगे तो आपके वे कर्म दिव्य हो जायेंगे । दिव्य कर्म भी आपको दिव्य फल देंगे और दिव्य-में-दिव्य है मुक्ति, दिव्य-में-दिव्य ईश्वरीय आनंद है, दिव्य-में-दिव्य परमात्म-रस है ।

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं : **जन्म कर्म च मे दिव्यम्...** आसाराम के जन्मदिवस के निमित्त हम आपका भी जन्मदिवस चाहते हैं । आपके शरीर का जन्म तो हो गया, हम चाहते हैं कि आपके जन्म और कर्म भी दिव्य हो जायें...

जन्मदिवस कैसे मनायें ?

जन्मदिवस मनाना चाहिए किन्तु कैसे मनायें इसका भी ज्ञान होना चाहिए । जैसे सूर्योदय के समय वातावरण में उत्साह, आनंद एवं प्राणवायु की विशेषता होती है, ऐसे ही जन्मदिवस मनाओ तो आपके जीवन में भी उत्साह, आनंद एवं प्रीति की विशेषता प्रगट हो सकती है । शर्त यह है कि जन्मदिवस मनाने की कला का ज्ञान होना चाहिए ।

पाश्चात्य जगत के लोग 'केक' बनाते हैं, फिर मोमबत्तियाँ जलाते हैं । जिसका जन्मदिवस होता है उसके हाथ में छुरी देते हैं । 'केक' पर छुरी चलाने से पूर्व उसे मोमबत्तियाँ फूँक मारकर बुझानी पड़ती हैं ।

अगर आप एक घूँट पानी पी लेते हैं या होठों से प्याला छू लेते हैं तब लाखों सूक्ष्म कीटाणु उस प्याले पर लग जाते हैं । जब फूकेंगे तो कितने कीटाणु केक पर बरसेंगे ? इसका अंदाज लगाइये तथा फूँकने के साथ थूक के कण भी केक पर गिरते हैं यह पक्की बात है । अतः जिसका जन्मदिवस है वह फूँके तथा थूके और फिर आप उसका जूठा कीटाणुयुक्त 'केक' खायें यह आपके लिए उचित नहीं है । इसी प्रकार मोमबत्तियाँ बुझाकर प्रकाश से अंधकार की ओर जायें यह भी आपके लिए उचित नहीं है ।

हमारी संस्कृति में तो दीया जलाने की परंपरा है, दीप बुझाने की नहीं । केक पर फूँकते-थूकते प्रकाश से अंधकार की ओर जाने की नहीं अपितु 'ज्योत से ज्योत जगाओ,' 'जय जगदीश हरे' की आरती करके अंधकार से प्रकाश की ओर जाने की परंपरा है । दीया जलाओ तो उसकी लौ ऊपर की ओर जाती है । जीव जन्मता है ऊपर उठने के लिए, प्रकाश की तरफ जाने के लिए... भारत हमेशा से प्रकाश का पुजारी रहा है :

असतो मा सद्‌गमय । तमसो मा ज्योतिर्गमय ।
मृत्योर्मा अमृतं गमय ।

प्रकाश से अंधकार में जाने के लिए जन्मदिवस नहीं है अपितु अंधकार से प्रकाश में जाने के हेतु से जन्मदिवस मनाना चाहिए ।

तुम्हारा शरीर हो या मित्र का, अथवा धरती की कोई भी चीज हो सबमें ये पाँचभूत पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश सारतत्त्व हैं । इन्हें देव भी कह दो तब भी आनंद है, मैं इन्कार नहीं करता । इन पाँच देवों से तुम्हारा शरीर बना है । इन पंचदेवों में ही तुम्हारा शरीर रहता है और इन पंचदेवों में ही तुम्हारा शरीर समाप्त हो जाता है ।

थोड़े-से चावल ले लें । इन चावलों को पाँचभूतों के पाँच रंगों से रँग डालें : सफेद (जल), लाल (तेज), पीला (पृथ्वी), हरा (वायु) और नीला (आकाश) । इन चावलों से स्वस्तिक बना लें एवं उन पर (अगर आपका ४०वाँ जन्मदिवस पूरा हो रहा है तो) ४० दीये रख दें । बीच में ४१वाँ दीया बड़ा रखें ।

आपके मित्र एवं हितैषी दीये जलायें । ४१वाँ वर्ष शुरू हो रहा है, अतः आपके मित्र-हितैषियों में जो सज्जनता एवं साधुताई में सबसे बड़ा हो उनसे ४१वाँ बड़ा दीया जलाने के लिए प्रार्थना करें कि : 'पिताजी ! माताजी ! चाचाजी ! (जो भी हों) आज ४१वाँ वर्ष आरंभ हो रहा है उसका दीया आप ही

प्रकाशित करें।'

आपके मित्र और हितैषी यह प्रार्थना करें कि 'आपके जीवन के ४० वर्ष बीत गये... आज आपकी ४०वीं वर्षगाँठ है। आज से आपका नया वर्ष शुरू हो रहा है... आज से आपके जीवन में विशेष प्रकाश हो, विशेष समझ हो, विशेष माधुर्य हो और विशेष उमंग हो...

फिर आपके मित्र-हितैषी निम्नलिखित वैदिक मंत्र का पाठ करें :

समास्त्वाग्नऽऋतवो वर्धयन्तु संवत्सराऽ ऋषयो यानि सत्या।
सं दिव्येन दीदिहि रोचनेन विश्वाऽआ भाहि प्रदिशश्चतस्रः ॥

(यजुर्वेद संहिता : २७.१)

अगर इस प्रकार से मंत्रोच्चारण नहीं कर सकते तो कोई बात नहीं। वेद का आशीर्वचन अपनी भाषा में भी दुहरा सकते हैं :

''आपके जन्मदिवस पर हमारी शुभकामनाएँ हैं। वेद भगवान का आपको आशीर्वाद है। ईश्वर की, पंचभूतों की आप पर कृपा हो, यही हमारी प्रार्थना है।''

आपके मित्र-हितैषी आपसे कहें : ''आपके जन्मदिवस पर वेद भगवान का आशीर्वाद आपको प्राप्त हो। आपके जीवन की कठिनाइयाँ आपके जीवन का विकास करें और आपको भगवत्प्रसाद प्राप्त करायें।

वर्ष की सभी ऋतुएँ आपके लिए अनुकूल हों। वर्ष की सभी ऋतुएँ आपके साथ रहें और आपका स्वास्थ्य-संवर्धन करें। मित्र ! वर्ष का सारा समय आपके लिए अनुकूल हो। वर्ष के सारे सत्कर्म आपके लिए शुभ हों और आप प्रगतिशील रहें। मंत्रदृष्टा ऋषि आपका ज्ञान-संवर्धन करें।

सबके सत्य संकल्प आपके जीवन को पुष्ट करें, सबके सत्य संकल्प आपके जीवन को सत्यसंपन्न बनायें। आप दिव्य रोचन से सम्यक् दीप्त और अपनी दिव्यता-सुंदरता से सभी दिशाओं, प्रदिशाओं को जगमगाते रहें - ऐसी हमारी शुभकामना है, ऐसा हमारा शुभाशीष है।''

अपना जन्मदिन मनाओ तो अपने से जो छोटे हैं उनसे भले शुभकामना लो किन्तु जो आपसे बड़े हैं, उनके आगे नतमस्तक हो जाओ। जो ज्ञान[illegible] तप में, विद्या में बड़े हैं उनको प्रणाम करो।

इस तरह से जन्मदिन मनाना चाहिए अ[illegible] अन्त में भगवान की आरती करनी चाहिए। हो स[illegible] तो कीर्तन करना चाहिए, कीर्तन के बाद २-५ मिन[illegible] ध्यानस्थ होना चाहिए और Happy Birthday[illegible] बजाय अपनी संस्कृति के अनुरूप शुभकामनाएँ दे[illegible] चाहिए।

जन्मदिन की शुभकामनाएँ... पृथ्[illegible] सुखदायी हो, जन्मदिवस की बधाई हो, बधा[illegible] हो। जल सुखदायी हो, जन्मदिवस की बधाई हो[illegible] बधाई हो। तेज सुखदायी हो, जन्मदिवस की[illegible] बधाई हो, बधाई हो। वायु सुखदायी हो[illegible] जन्मदिवस की बधाई हो, बधाई हो। आकाश[illegible] सुखदायी हो, जन्मदिवस की बधाई हो, बधाई[illegible] हो। प्रकृति सुखदायी हो, जन्मदिवस की बधाई[illegible] हो, बधाई हो। देवता सुखदायी हों, जन्मदिवस[illegible] की बधाई हो, बधाई हो। यक्ष, गंधर्व, किन्नर[illegible] सुखदायी हों, जन्मदिवस की बधाई हो, बधाई[illegible] हो। परमात्मा सुखदायी हों, जन्मदिवस की बधाई[illegible] हो, बधाई हो। गुरु सुखदायी हों, जन्मदिवस की बधाई हो, बधाई हो। मित्र, हितैषी, कुटुंबीजन, सुहृद-सखा सुखदायी हों, जन्मदिवस की बधाई हो, बधाई हो। आदि-आदि वाक्यों से शुभकामना देकर जन्मदिवस मना सकते हो।

फूँकना-थूकना हमारे वश की बात नहीं है और अब आपके वश की भी बात नहीं रहेगी इसका मुझे पक्का विश्वास है।

*

संतों की हनुमंत-उपासना

[हनुमान जयंती : २७ अप्रैल २००२]

हनुमानजी का जीवन पुरुषार्थ और साहस की प्रेरणा देता है, संयम एवं सदाचार की प्रेरणा देता है, निष्काम सेवा की प्रेरणा देता है : **राम काज बिनु कहाँ बिश्रामा...**

मनोजवं मारुततुल्यवेगं
जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम्।

वातात्मजं वानरयूथमुख्यं
श्रीरामदूतं शिरसा नमामि ॥

'जिनकी मन के समान गति और वायु के समान वेग है, जो परम जितेंद्रिय और बुद्धिमानों में श्रेष्ठ हैं, उन वायुपुत्र वानराग्रगण्य श्रीरामदूत को मैं प्रणाम करता हूँ।'

मुझे किसीने पत्र द्वारा बताया : ''कान्वेंट स्कूल में मास्टर ने ब्लैकबोर्ड पर एक तरफ गधा एवं दूसरी तरफ एक बंदर का चित्र बनाया। फिर बच्चों से पूछा :

'यह पूँछवाला कौन है ?'

बच्चों ने कहा : 'गधा।'

मास्टर : 'यह दूसरा पूँछवाला कौन है ?'

बच्चे : 'बंदर।'

मास्टर : 'दोनों पशु ही हैं न ?'

बच्चे : 'हाँ।'

मास्टर : 'तुम्हारे हिन्दुस्तानी लोग पूँछवाले पशु बंदर को भगवान के रूप में पूजते हैं कितने बेवकूफ हैं ?'

ऐसा करके वे बच्चों की आस्था डिगाते हैं एवं अपने ईसाई धर्म की महिमा सुनाते हैं। बापूजी ! ये कान्वेंट स्कूल शिक्षा के केंद्र हैं या धर्मांतरण के अड्डे ? हमारे मासूम बच्चों के दिलों में हिन्दू धर्म एवं संस्कृति के प्रति नफरत पैदा करने का यह कैसा षड्यंत्र है ? बापूजी ! अब हमसे सहा नहीं जाता है।...''

मेरा किसी मिशनरी से, किसी धर्म से कोई विरोध नहीं है। मैं तो साँपों के बीच रहा लेकिन साँपों ने मुझे नहीं काटा। एक बार एक साँप पर मेरा पैर पड़ गया था फिर भी उसने मुझे नहीं काटा। मेरे हृदय में गुरु का ज्ञान है कि साँप में भी अपना ही प्यारा है तो मैं किसी संप्रदाय, किसी जाति से क्यों नफरत करूँगा ? फिर भी कोई गड़बड़ करता है तो कहना पड़ता है कि भैया ! भारत में ऐसा न करो। भगवान तुमको सद्बुद्धि दें... जो लोग हनुमानजी को बंदर कहते हैं भगवान उनकी बुद्धि को प्रकाश दें और हम क्या कह सकते हैं ?

मुट्ठीभर लोगों को लेकर शिवाजी ने औरंगजेब की नाक में दम कर दिया था। ऐसे शिवाजी के गुरु समर्थ रामदास हनुमानजी के भक्त थे। वे हनुमानजी से बातचीत करते थे।

उन्होंने तो महाराष्ट्र में कई हनुमान मंदिरों की स्थापना की जिनमें से ११ मंदिर आज भी बड़े प्रसिद्ध हैं। उन मंदिरों में जानेवालों में श्रद्धा, साहस, पौरुष आदि सद्गुणों का संचार होता है, लोगों की मनोकामनापूर्ति होती है।

गोस्वामी तुलसीदासजी को भी हनुमानजी के दर्शन हुए एवं उनसे तुलसीदासजी को मार्गदर्शन मिला था - यह तो सभी जानते हैं।

मेरे एक परिचित संत हैं श्री लालजी महाराज। उनकी उम्र ८७ साल के करीब है। उनके पिता अमथारामजी पर किसीने मूठ (मारण क्रिया) मारी थी, जिससे उनका देहावसान हो गया था। जिसके लिए मूठ मारी जाती है वह कहीं का नहीं रहता है, कोई हकीम, डॉक्टर अथवा झाड़-फूँक करनेवाला उसे ठीक नहीं कर सकता। लेकिन लालजी महाराज हनुमानजी के भक्त हैं। जब उन पर मूठ मारी गयी तो हनुमानजी एक नन्हे-मुन्ने बालक का रूप लेकर आये और लालजी महाराज उनके साथ सूक्ष्म शरीर से उड़ते-उड़ते इस पृथ्वीलोक से परे किसी दिव्य वन में जा पहुँचे। वहाँ एक ऋषि विराजमान थे।

उस नन्हे-से बालक के रूप में विराजमान हनुमानजी ने इशारा किया कि 'यह मेरा भक्त है। इस पर मारणप्रयोग किया गया है। इसको ठीक कर दो।' उन ऋषि ने किसी वनस्पति की पतली डाली से उतारा करके फेंका तो वह डाली जल गयी ! फिर उन ऋषि ने कहा :

''तुम्हारे इष्ट हनुमानजी तुम्हारे रक्षक हैं। इसीलिए तुम्हारी मृत्यु टल सकी है। तुम्हारा मंगल होगा।''

लालजी महाराज अभी भी मालसर (गुज.) में विद्यमान हैं। उन्होंने बाद में श्रीरामजी के दर्शन भी किये और माँ गायत्री के भी दर्शन किये।

मैं घर छोड़कर साधना हेतु उधर गया तब मेरी साधना देखकर वे मेरे मित्र बन गये। ऐसे अनेक लोगों से परिचय हुआ है जिन्होंने हनुमानजी की

कृपा को पाया है फिर भी जो लोग कहते हैं कि 'हिन्दुस्तानी एक बंदर की पूजा करते हैं, वे मूर्ख हैं।' ऐसा कहनेवालों के लिए इतना ही कहना है कि हनुमानजी के उपासकों को मूर्ख कहनेवाले उन महामूर्खों पर भगवान कृपा करें और समाज सतर्क रहे।

रामकृष्ण परमहंस ने भी हनुमानजी की उपासना की थी। वे कहते थे :

''मैंने माँ काली की उपासना के बाद अपने कुलदेवता, इष्टदेवता श्रीराम की उपासना की। जब श्रीराम की उपासना की तो उनके प्रिय सेवक हनुमानजी का भी चिंतन होता था। हनुमानजी जाग्रत देव हैं। हनुमानजी, नारदजी, अश्वत्थामा आदि चिरंजीवी हैं। उन चिरंजीवी हनुमानजी की उपासना के काल में मुझे कुछ विलक्षण अनुभव होने लगे।

मैं उपासना करते-करते चीखने लगता, कभी पेड़ पर चढ़ जाता, कमर पर कपड़ा बाँधकर पूँछ की नाईं लटका देता और कोई फल खाने को मिलता तो बिना छिलका उतारे खा जाता था। मेरे मेरुदंड का अंतिम भाग एक इंच जितना बाहर भी निकल आया था। उपासना का प्रभाव मेरे मन के साथ तन पर भी पड़ा।''

शिष्यों ने पूछा : ''मेरुदंड का अंतिम भाग जो एक इंच बाहर निकल आया था उसका क्या हुआ ?''

श्री रामकृष्ण ने कहा : ''उपासना छोड़ने के बाद धीरे-धीरे वह पूर्ववत् हो गया।''

मैंने भी अपने साधनाकाल में हनुमानजी की उपासना की थी। मुझे भी हनुमानजी की उपासना करने से, जप करने से बहुत अनुभव हुए। उपासनाकाल में मैं काफी बल का एहसास करता था। मैंने हनुमानजी की उपासना थोड़ी-बहुत की थी, किन्तु मेरी दिशा ब्रह्मज्ञान प्राप्ति की होने के कारण यह साधना मैं पूरी न कर पाया। फिर मैंने वही मंत्र एक साधक को दिया तो उसे भी स्वप्न में हनुमानजी के दर्शन हुए। हनुमानजी ने उससे कहा :

''बेटा ! कलियुग में ये उपासनाएँ जल्दी न फलती हैं, तुम इसे छोड़ दो।''

ऐसे हनुमानजी को हम अस्वीकार करें ? ऐ दुर्मति हमारे पास नहीं है।

हनुमानजी जाग्रत देव हैं, चिरंजीवी हैं, संयम शिरोमणि हैं, ज्ञानियों में अग्रगण्य हैं, भक्तों के रक्ष हैं। ऐसे हनुमानजी के श्रीचरणों में हम प्रणाम क हैं। आप सभीको हनुमान-जयंती की खूब-खू बधाई...

जय जय जय हनुमान गोसाईं।
कृपा करो गुरुदेव की नाईं॥

हनुमानजी को पूँछवाला बंदर कहक धर्मांतरण करनेवाले ऐसे स्वार्थी धर्मांध व्यक्तिय को अपनी दुर्बुद्धि त्यागकर हनुमानजी की उपासन का फायदा उठाना चाहिए। हिन्दुस्तान में रहक हिन्दू बच्चों की श्रद्धा पर कुठाराघात करके धर्मान्तिरण कराके देश को और भारतीय संस्कृति को कमजोर बनाने के पाप से बचना चाहिए।

हिन्दुओं को साहसी एवं निडर बनना चाहिए। ऐसे दुर्बुद्धि लोगों को सबक सिखाना चाहिए। उन लोगों को एवं संगठनों को हम धन्यवाद देते हैं जो उनकी पोलपट्टी खोलकर देश की, संस्कृति की अस्मिता की रक्षा करते हैं। भगवान उनको सद्बुद्धि, साहस, सुन्दर सूझबूझ दें। हिन्दुओं की अतिसहिष्णुता का दुरुपयोग करनेवाले, हनुमानजी की गधे के साथ तुलना करनेवाले लोगों की बुद्धि कैसी है ? कैसा पढ़ाते होंगे बच्चों को ? कोमल हृदय के बच्चों पर स्कूलों में पढ़ाई के नाम पर विष से भरी तथा हिन्दू धर्म के देवी-देवताओं एवं संतों के प्रति द्वेषपूर्ण हरकतें करनेवाले लोग अपने इन कार्यों से बाज आ जायें। बच्चों के माता-पिता सावधान रहें। अपने ही बच्चे अपनी संस्कृति के व अपने दुश्मन हो जायें ऐसे मिशनरी स्कूलों से बचो और दूसरों को बचाओ। अपनी मानवमात्र का मंगल चाहनेवाली भारतीय संस्कृति की गरिमा समझानेवाले स्कूलों में ही बच्चों को पढ़ायें नहीं तो कबीरजी की कहावत याद रखें :

भलो भयो गँवार, जाही न व्यापी विषमयी माया।

समय की माँग...

हनुमानजी को गधे के साथ अंकित करके हिन्दू बच्चों की आस्था डिगानेवालों को बच्चे ऐसे सबक सिखायें जैसे राष्ट्रपति राधाकृष्णन ने अपने विद्यार्थीकाल में ऐसे मास्टरों की दुष्टता पर खुले प्रहार किये थे । डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार ने १३ वर्ष की उम्र में हिन्दुस्तान में धर्मान्तरण करानेवाले एवं बदनियत से पढ़ानेवाले का मुँह काला कर दिया था । क्या ऐसे विद्यार्थी अब नही हैं ? क्या ऐसे सूझ-बूझवाले अभी समाज में नहीं हैं ?

अमदावाद (गुज.) के बापूनगर में कान्वेंट स्कूल में पायल पहनकर जानेवाली बच्चियों के पैरों पर डंडे मारे जाने, खून निकाले जाने के समाचार भी सुनने को मिलते हैं । ईसाई स्कूल में घटित ऐसी घटना का लोगों ने अखबारों में तथा अन्य माध्यमों द्वारा विरोध किया तब कहीं ऐसी हरकत करनेवाले सुधरे । रायपुर (छत्तीसगढ़) से भी इसी तरह की खबरें आ रही हैं । देशवासियों को सतर्क-सजाग होना चाहिए, यह समय की माँग है । - *संपादक*

सेवाधारियों एवं सदस्यों के लिए विशेष सूचना

(१) कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नगद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें । इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी । अतः अपनी राशि मनीऑर्डर या ड्राफ्ट द्वारा ही भेजने की कृपा करें ।

(२) 'ऋषि प्रसाद' के नये सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आपकी सदस्यता की शुरूआत पत्रिका की उपलब्धता के अनुसार कार्यालय द्वारा निर्धारित की जायेगी ।

स्वामी प्रपन्नाचार्य

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

प्रयाग में स्वामी प्रपन्नाचार्य नामक एक महान संत हो गये हैं । एक बार माघ मेले में उनका सत्संग चल रहा था । सत्संग के बाद वे वहीं बने अपने अस्थायी निवास में गये । मध्याह्न के समय उनके शिष्य गोविंदाचार्य भगवान को भोग लगाकर प्रसाद बाँट रहे थे । भीड़ में से एक व्यक्ति ने आगे आकर उनसे प्रसाद के लिए आग्रह किया । उसे देखकर गोविंदाचार्य बिगड़ गये । बाहर कोलाहल सुनकर स्वामीजी ने उन्हें बुलाया तथा कोलाहल का कारण पूछा । उन्होंने कहा : ''महाराज ! एक मियाँ आइ गवा रहा । ओही से बतियाव होई गवा ।''

''काहे ?'' स्वामीजी ने आश्चर्य से पूछा ।

गोविंद : ''महाराज ! ऊ परसाद माँगत रहा !''

स्वामीजी : ''तो ओका परसाद दिया की नाहीं ?''

गोविंद : ''नाहीं महाराज !''

स्वामीजी : ''काहे ?''

गोविंद : ''महाराज ! ऊ जो मुसलमान रहा ।''

यह सुनकर स्वामीजी को दुःख हुआ । वे बोले : ''गोविंद ! गीता मां भगवान कहिन हैं :

अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः ।
प्राणापानसमायुक्तः पचाम्यन्नं चतुर्विधम् ॥

तब तू ओह मां बिराजमान वैश्वानररूपी नारायण का भोजन करे तेऊं कि मुसलमान का ? एही तुम गीता समझे हो ? भोजन तो नारायण कां जात है ना हिन्दू कां, न मुसलमान कां ! परसाद देत मां कोई भेद ना करो ! जाव ओका परसाद देई आवा ।''

गोविंदजी गये पर तब तक वह व्यक्ति चला गया था । गोविंदजी उसे ढूँढ़कर ले आये तथा उससे क्षमा माँगकर उसे भरपेट भोजन कराया । धन्य हैं वैदिक संस्कृति, भारतीय संस्कृति में जन्म लेनेवाले, जीनेवाले ।

गाफिल अजु सोचत नहीं...

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

सन् १६०० के आस-पास की बात है :

सूरत में माधवदास महाराज का आश्रम था। वे पवित्र, महान संत परमात्मा का ध्यान करते थे एवं दूसरों को भी कराते थे। कई पुण्यात्मा उनके दर्शन के लिए जाते थे।

उनके आश्रम के लिए सीधा-सामान एक किराने की दुकान से आता था। महीना पूरा होने पर आश्रम की ओर से उसका पैसा चुका दिया जाता था। उस किरानेवाले सेठ सुबोधचंद्र के पुत्र का नाम था - भुवन।

एक बार शाम को भुवन पैसा लेने के लिए महाराज के पास गया। हिसाब देखकर माधवदासजी ने कहा : ''भाई ! हिसाब में भूल है। पिछले महीने की रकम भी इसमें चढ़ा दी गयी है। कुटिया में दीया जल रहा है। वहाँ रोशनी में बैठकर तुम हिसाब की जाँच कर लो।''

भुवन दीपक के प्रकाश में हिसाब देखने बैठा। वहाँ कई पुस्तकें पड़ी हुई थीं। भुवन की नजर उन पर भी पड़ी। उनमें से एक पुस्तक के प्रथम पृष्ठ पर ही लिखा था :

गाफिल अजु सोचत नहीं, बिरथा जनम बिताय।
तेल घटा बाती बुझी, अंत बहुत पछताय॥

भुवन बुद्धिमान बालक था। वह दुकान में अपने पिता की मदद भी करता था और साथ में पढ़ता भी था। फालतू गप्पें मारने में अथवा व्यर्थ की चेष्टाओं में समय बरबाद न करके वह समय का सदुपयोग करता था।

हिसाब तो पूरा हो गया परंतु पुस्तक के प्रथ पृष्ठ पर लिखी हुई पंक्तियाँ पढ़कर भुवन के मन विचार आया कि '**तेल घटा बाती बुझी...** का क अर्थ है ? दीये में तेल खत्म हो जाता है तो बा बुझ जाती है, इसमें नया क्या है ? दीये में फिर तेल डाल दें तो दीया जल सकता है। तेल खत्म तो दूसरा तेल डाला जा सकता है और बाती बु जाय तो दूसरी बार जलाई भी जा सकती है। फि यह बात पुस्तक में क्यों लिखी कि **तेल घटा बात बुझी, अंत बहुत पछताय॥** इसमें पछताने जैस क्या है ?'

उसने महाराज के पास जाकर शंका व्यक्त की : ''बापू ! इसका अर्थ क्या है ?''

माधवदासजी बोले : ''बेटा ! इसका अर्थ आध्यात्मिक है। इसमें मिट्टी के दीये की बात नहीं है बल्कि इस देहरूपी दीये की बात है। हम जो श्वासोच्छ्वास लेते हैं उसमें हमारा आयुष्यरूपी तेल खर्च होता है। इस आयुष्यरूपी तेल के खत्म होने पर कोई प्राणी जीवित नहीं रहता फिर चाहे प्रधानमंत्री हो या सामान्य कर्मचारी। समय की धारा निरंतर बहती रहती है। हमें साधना करके, योगाभ्यास करके महान आत्मा को, अमरत्व को पा लेना चाहिए, जहाँ मौत की दाल नहीं गलती। हर्ष, शोक आदि का जिसे स्पर्श नहीं ऐसा परमपद, परमात्म-प्रसाद पा लेना चाहिए। अन्यथा, संसार में भटकते-भटकते मृत्यु आ जायेगी। फिर कोई किसीका नहीं रहेगा। हमें अपने कुटुंब का, अपने माता-पिता का और अपना कल्याण कर लेना चाहिए।''

इतना कहकर महाराज क्षणभर के लिए शांत हो गये। उन्होंने देखा कि 'यह बालक कोई सामान्य जीव नहीं है, पूर्वजन्म का कोई पुण्यात्मा है। वैसे तो कई लोग ऐसी पुस्तकें पढ़ते हैं किंतु इतना ध्यान नहीं देते। इसे पुस्तक का यह वाक्य अच्छा लग गया है और इसमें जानने की जिज्ञासा भी है।' महाराज के मन में उस बालक के लिए सद्भाव जाग उठा। वे आगे बोले :

''बेटा ! **तेल घटा बाती बुझी...** का अर्थ यह है कि आयुष्यरूपी तेल खत्म होने से जीवनरूपी दीपक बुझ जाता है। फिर कोई कितना भी हिलाये-डुलाये, कान के पास जाकर चिल्लाये कि 'काका... काका... पिताजी... पिताजी... !' तो भी काका या पिता उठ नहीं सकते। जीवनरूपी दीपक के बुझते ही यह शरीर मुर्दा हो जाता है। फिर इसे स्मशान में ले जाना पड़ता है। जब तक आत्मा का प्रकाश होता है तब तक देह जीवित रहती है। आयुष्य पूरा होने पर 'राम बोलो भाई ! राम...' हो जाता है।''

भुवन : ''बापू ! फिर मर जाना पड़ता है ?''

माधवदास महाराज : ''हाँ, बेटा ! सबको एक-न-एक दिन मरना ही पड़ता है और ऐसा भी नहीं है कि वृद्ध होने पर ही मरते हैं। कई लोग बेचारे युवावस्था में ही मर जाते हैं। किसीकी आयु उसकी बाल्यावस्था में ही पूरी हो जाती है तो कई तंदुरुस्त होते हैं फिर भी हृदयाघात से मर जाते हैं। आयुष्य कब पूरा हो जाय यह कहा नहीं जा सकता। रेलगाड़ी के चलने का तो समय होता है कि किस प्लेटफार्म से कब चलेगी किंतु यह जीवनरूपी गाड़ी कब और कहाँ से चल पड़े, यह कह नहीं सकते।''

भुवन : ''मृत्यु से बचना हो तो क्या करना चाहिए ?''

माधवदास : ''मृत्यु से बचना हो तो जहाँ मृत्यु पहुँच नहीं सकती उस अमर आत्मपद का अनुभव करके मुक्त हो जाना चाहिए।''

भुवन की जिज्ञासा बढ़ गयी। उसने श्रद्धा, भक्ति व नम्रता से पूछा : ''परमात्मा का साक्षात्कार कैसे होता है ?''

माधवदास : ''बेटा ! तू कोई पुण्यात्मा है। तेरे माता-पिता को धन्यवाद है। मैं तुझे बताता हूँ।''

भुवन : ''बापू ! आपकी बड़ी कृपा होगी।''

माधवदास : ''हमारी आयु लंबी हो इसके लिए श्वासोच्छ्वास कम खर्च करना चाहिए। इसके लिए प्राणायाम करना चाहिए।''

जो मनुष्य कुकर्म करता है, पाप करता है, झूठ बोलता है, व्यसनी जीवन जीता है उसके श्वासोच्छ्वास ज्यादा खर्च होते हैं। जो मनुष्य संयमी जीवन जीता है, ध्यान करता है, प्राणायाम करता है, अजपाजाप करता है, श्वासोच्छ्वास की गिनती करता है उसका आयुष्य लंबा होता है। चाँगदेव महाराज १४०० साल तक जीये थे और कई महापुरुष आत्म-साक्षात्कार करके ज्यादा जीने का मोह छोड़कर परमात्मा में लीन भी हो गये हैं।

किसीके ज्यादा या कम जीने का महत्त्व नहीं है। वह अपनी आत्मा को पहचान ले तो मृत्यु उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकती। देह की मृत्यु भले हो जाय परंतु जीवात्मा परमात्मा के साथ मिल जाती है। फिर उसे गर्भवास का दुःख सहना नहीं पड़ता।

भुवन ने पूछा : ''गुरुदेव ! क्या भगवान के दर्शन हो सकते हैं ? और क्या भगवान के साथ मिलन भी हो सकता है ?''

माधवदास महाराज ने कृपा बरसाते हुए कहा : ''हाँ। जरूर हो सकता है।''

भुवन : ''गुरुदेव ! मुझे इसकी युक्ति सिखाइये न !''

माधवदास महाराज : ''बेटा ! मैं तुझे अभी सिखा सकता हूँ किन्तु तेरे पिता तुझे यहाँ रहकर साधना नहीं करने देंगे। अभी कार्तिक महीने में सिद्धपुर में बड़ा मेला लगा हुआ है उसमें दूर-दूर से कई संत आते हैं। उनमें कोई ऊँचे संत मिलें तो तू उनसे ध्यान सीख ले एवं आत्मा क्या है, परमात्मा क्या है ? इस विषय का ज्ञान प्राप्त करके, भगवान के दर्शन करके वापस आना। अपने माता-पिता एवं कुल का उद्धार करनेवाली साधना में लग जा।''

भुवन को बात गले उतर गयी। माधवदासजी महाराज को प्रणाम करके वह निकल पड़ा। चलते-चलते जहाँ रात पड़े वहाँ किसी मंदिर में रुक जाता, प्रसाद लेता और सुबह पुनः चल पड़ता। कई दिनों के बाद भुवन सिद्धपुर पहुँचा।

इधर भुवन के पिता उसको ढूँढ़ते-ढूँढ़ते महाराज के पास पहुँचे और उसके विषय में पूछा।

तब माधवदास महाराज ने कहा : ''वह अब तुम्हारा पुत्र नहीं बल्कि परमात्मा का पुत्र बन गया है। वह तो तुम्हारे कुल का उद्धारक बन गया है।

कुछ समय के लिए साधना करने गया है। थोड़े समय में वापस आ जायेगा।''

भुवन के पिता को लगा कि महाराज ने मेरे पुत्र को कहीं छुपा दिया है अथवा भगा दिया है।

सुबोधचंद्र की बुद्धि भ्रष्ट हो गयी थी। सिगरेट-शराब पीनेवालों की संगति से उसकी बुद्धि बिगड़ गयी थी। अतः, उसने विचार किया कि कुछ भी करके माधवदास महाराज को मजा चखाऊँ। इन्होंने ही मेरे पुत्र को भगा दिया है।

उस सेठ ने गाँव में जाकर कुप्रचार कर दिया एवं पुलिस चौकी में शिकायत दर्ज करवा दी कि 'मेरा पुत्र माधवदास महाराज के पास पैसे लेने गया था किन्तु अभी तक वापस ही नहीं आया। उन्होंने मेरे पुत्र को बेच दिया है अथवा कैद कर लिया है।'

उस समय वहाँ का थानेदार मुसलमान था। उसने सोचा कि इस हिन्दू साधु की जरा खबर लूँ। वह गुस्से से लाल-पीला होता हुआ, चार सिपाहियों के साथ माधवदास महाराज के पास आया और बोला :

''महाराज! भुवन यहाँ आया था?''

माधवदासजी : ''हाँ, आया था। हिसाब में थोड़ी भूल थी, अतः कुटिया में उसे हिसाब की जाँच करने के लिए कहा था। वहाँ एक ग्रंथ में उसने पढ़ा :

गाफिल अजु सोचत नहीं, बिरथा जनम बिताय।
तेल घटा बाती बुझी, अंत बहुत पछताय॥

उसने इसका अर्थ पूछा। मैंने उसे अर्थ बताया। उसका पूर्वजन्म का कोई पुण्य होगा, अतः उसकी जिज्ञासा जगी और उसे सत्य को जानने की, प्रभु को पाने की लगन लगी। उसने मुझसे पूछा और मैंने उसे मार्ग बताया। मैंने उसे कहा : 'अभी कार्तिक महीने में सिद्धपुर के मेले में कई साधु-संत आयेंगे। तू किसी आत्मज्ञानी महापुरुष की खोज कर और उनके पास जाकर ज्ञान प्राप्त कर। यहाँ तेरे पिता तुझे ध्यान नहीं करने देंगे।''

इतना कहकर माधवदास महाराज ने उस थानेदार पर कृपा की एक मीठी नजर डाली।

(क्रमशः)

शहतूत : ग्रीष्मोपयोगी फल

लाल एवं काले रंग के शहतूत खट्टे-मीठे औ हरे रंग के शहतूत मीठे होते हैं। कच्चे शहतूत खट्टे गर्म, पचने में भारी, रक्तपित्त पैदा करनेवाले एवं हानिकारक होते हैं। अधपके शहतूत ज्यादा खाने से दस्त होने लगते हैं।

आयुर्वेद के मतानुसार पके हुए शहतूत स्वाद में मधुर, थोड़े खट्टे, गुण में ठंडे, भारी, स्वादिष्ट, रुचिकर्त्ता, भूखवर्धक, हृदय के लिए हितकर, पित्त एवं वायु नाशक होते हैं। शहतूत दाह, तृषा, जलन, कब्जियत, आँव, आँत एवं मुँह के छाले, चक्कर, मूर्च्छा, उल्टी, ज्वर, अरुचि, प्रमेह, सूजाक, मूत्राल्पता, पित्तप्रकोप, उदरकृमि, रक्तदोष, चेचक, कंठरोग, कटिवात आदि रोगों में लाभदायी हैं।

पके हुए शहतूत संतुलित मात्रा में खाने से हृदय को शांति एवं मन को प्रसन्नता मिलती है तथा झूठी तृषा शांत होती है। ग्रीष्म ऋतु में इनका सेवन अत्यंत लाभप्रद है। गर्मी के प्रभाव से होनेवाले उपद्रवों जैसे गर्मी, दाह, तृषा, मूत्रावरोध एवं लू आदि में इनके सेवन से लाभ होता है। शहतूत पौष्टिक, कफनाशक, मूत्रल, रक्त-शुद्धिकर्त्ता एवं दिमाग, फेफड़ों तथा तिल्ली को शक्ति देनेवाले हैं।

गर्मी में वयस्क व्यक्ति रोज शहतूत का १०० से ५०० मि.ली. रस पी सकते हैं।

* औषधि-प्रयोग *

शहतूत का ठंडा शरबत पीने से किसी भी अंग में होनेवाली जलन शांत होती है। इसके बीजों को पीसकर अथवा उसके पेड़ की गोंद अथवा शहतूत के रस को बिवाई पर लगाने से लाभ होता है। इसके रस में मिश्री अथवा शहद डालकर पीने से कंठ की

सूजन, आवाज का भारी होना आदि मिटता है। पके-मीठे शहतूत के रस में ग्लुकोज़ अथवा मिश्री डालकर पीने से तीव्र ज्वर में लाभ होता है। इसकी जड़ की छाल का १०० ग्राम काढ़ा बनाकर ३ दिन तक रोज शाम को पीने से उदरकृमि का नाश होता है।

शहद और अनार भी तृषानाशक हैं। इनके सेवन से भी शहतूत के बहुत सारे गुण प्राप्त हो जाते हैं। *- साँईं श्री लीलाशाहजी उपचार केन्द्र, संत श्री आसारामजी आश्रम, जहाँगीरपुरा, वरियाव रोड, सूरत।*

*

गौ-चंदन धूपबत्ती एवं गोझरण अर्क के लाभ

एक सिगरेट का धुआँ सिगरेट पीनेवाले व्यक्ति के आस-पास के ६-८ व्यक्तियों को हानि कर सकता है तो एक 'गौ-चंदन धूपबत्ती' परिवार को सात्त्विकता, पवित्रता व आरोग्यता प्रदान कर दे यह स्वाभाविक ही है। आप 'गौ-चंदन धूपबत्ती' में एकाध बूँद घी लगाकर जलाते हैं तो हानिकारक परफ्यूम और सेंट वाले अगरबत्तियों के धुएँ से बचकर उससे पाँच गुना लाभ पाते हैं, हानि कतई नहीं और स्वास्थ्य की दृष्टि से पवित्र लाभ। 'गौ-चंदन धूपबत्ती' जलने के बाद उसमें मिलाये हुए घी और जड़ी-बूटियों के रस अवशेष बच जायेंगे। उसका (रस) ललाट पर तिलक करने से शिवनेत्र को (आज्ञाचक्र) जिसे विज्ञानी पीनियल ग्रन्थि कहते हैं, सक्रिय करने में सहायता मिलती है।

यदि आप 'गौ-चंदन' जलाते हैं तो अप्रत्यक्ष रूप से गौ-सेवा भी करते हैं तथा ६०० परिवारों की रोजी-रोटी में भी आप सहायक होते हैं। गौमाता की सेवा, गरीब कुटुंबों के रोजी-रोटी का पुण्य तथा पर्यावरण में शुद्धि फैलाने का पुण्य भी आपको प्राप्त होता है और अनजाने में आपके पड़ोसी भी लाभान्वित होते हैं। २२ रु. कि.ग्रा. कोयले के पाउडर से बनी अगरबत्ती में भिन्न-भिन्न प्रकार के जहरी सेंटों के सिवाय कुछ नहीं होता। 'गौ-चंदन धूपबत्ती' में चंदन, नागर मोथा, शुद्ध देशी घी, इलायची के छिलके और अन्य चीजें मिलाई जाती हैं। बाजारू काली धूपबत्ती में जहरीले केमिकल्स, रबड़, पुराने टायरों का चूर्ण व अन्य हानिकारक द्रव्य होते हैं, जो कार्बन डाइ-ऑक्साइड गैस पैदा करके आपके स्वास्थ्य एवं पर्यावरण को दूषित करने का पाप करते हैं। पैसे कमाने की लालच रखनेवालों ने अपने लोभ के आगे धार्मिक लोगों की जेबों को लूटना और देवी-देवताओं के चित्रों को भी नहीं बख्शा। बाजारू काली धूपबत्ती अथवा कोयले के पाउडर की अगरबत्तियों में मिलाया हुआ सेंट आपके व आपके कुटुंबी एवं पड़ोसियों के स्वास्थ्य और पर्यावरण को हानि पहुँचाते हैं। आपके अड़ोस-पड़ोस में गाय हो तो आप उक्त मिश्रण से धूपबत्ती बनायें अथवा अपनी गोशाला की धूपबत्ती जलायें लेकिन अगरबत्तियाँ न जलायें। आपका अगरबत्ती जलाने का उद्देश्य लाभ की जगह हानि न करे, इसकी आप अपने पर, पड़ोसियों पर और पर्यावरण पर कृपा करें।

विज्ञान ने भी साबित किया है कि गोबर, गौघृत से वायरस, कीटाणु नष्ट हो जाते हैं। मच्छरों के उपद्रव से छुटकारा पाने के लिए किये जानेवाले जहरीले रासायनिक पदार्थों के प्रयोग से मच्छर तो भागेंगे लेकिन आपको भी हानि होगी। इससे तो अच्छा है कि 'गौ-चंदन धूपबत्ती' के ऊपर थोड़ा नीम का तेल लगाकर जलायें। इस प्रकार मच्छर तो भागेंगे ही और आपको कोई हानि भी नहीं होगी।

'गोझरण अर्क' के सेवन से पेट की खराबियाँ ठीक होती हैं। यह किडनी, लीवर, पाचन-तंत्र व ज्ञानतंतु पर पड़े दुष्प्रभाव को हर लेता है। बुढ़ापे में लीवर व किडनी की तकलीफ तथा ऑपरेशन से बचा लेता है। दीर्घायु एवं स्वस्थ जीवन के लिए वैद्य की सलाह से अवश्य सेवन करें।

धूपबत्ती और 'गोझरण अर्क' - यह प्रसाद औरों तक पहुँचाना अथवा सौगात के रूप में देना आपके लिए शोभनीय कार्य है। आओ, मिलकर पवित्रता फैलायें, स्वास्थ्य-सुरक्षा बढ़ायें, ईश्वरीय आनंद पायें, औरों तक पहुँचायें। करोगे न पुरुषार्थ, लगोगे न प्रभु के लाल, रहोगे न खुशहाल !

ॐ आनंद ! ॐ आनंद !! ॐ आनंद !!!

जीवन-परिवर्तन

माननीय संपादक महोदय,

मेरा यह वर्त्तमान जीवन पूज्य बापूजी की ही देन है। मुझे उनकी करुणा-कृपा का पूर्ण अनुभव सन् १९९३ से हो रहा है। मैं युवावस्था आने के पूर्व ही कुसंगति के कारण हस्तमैथुन की गलत आदत का शिकार हो चुका था।

जिसके कारण करीब १५ साल की उम्र में ही शरीर का सार 'वीर्य' नष्ट होने लगा। अश्लील पुस्तकों और अश्लील फिल्मों में ही जीवन बीतता जा रहा था, जिससे जीवन में नीरसता, दुर्बलता व उदासीनता आ गयी थी। चेहरे का संपूर्ण तेज नष्ट होकर गाल अंदर को धँस गये, हाथ काँपने लगे और आँखें भी निस्तेज हो चुकी थीं। फिर भी मन में लगातार अश्लील विचार आने के कारण हस्तमैथुन जारी था।

ऐसी स्थिति में मैंने हजारों रुपये डॉक्टरों तथा हकीमों के पीछे खर्च कर दिये किन्तु उनका धंधा लोगों से रुपये कमाने का होने के कारण उन्होंने जो भी दवाई दी वह हस्तमैथुन की आदत को और बढ़ा देती थी। डॉक्टर-हकीम भी लड़कियों से सम्बन्ध बनाने की सलाह देकर अपनी कमाई हमेशा चालू रखने का कुभाव रखते थे।

मेरी स्थिति में कोई सुधार न आने के कारण मैंने आत्महत्या करने का विचार किया। जीवन के ऐसे नीरस दौर में मुझे एक मित्र द्वारा पूज्यपाद आसारामजी बापू की 'परम तप' और 'यौवन सुरक्षा' दो पुस्तकें मिलीं। इन पुस्तकों से मुझे इतना मार्गदर्शन तथा अनुकम्पा मिली कि मेरी गिरती हुई शारीरिक और मानसिक स्थिति सुधरने लगी। मेरा मन 'यौवन सुरक्षा' में लिखे हुए वीर्य-रक्षा के उपायों में लीन रहने लगा तथा स्वच्छ और पवित्र विचारों से मन शुद्ध होने लगा। कुसंस्कार की छाया दूर होने लगी और सुसंस्कार का भरपूर प्रसाद 'यौवन सुरक्षा' पुस्तक से मिला। जीवन में उदासीनता की जगह उत्साह व उमंग की एक नयी किरण जगने लगी। जीवन में वीर्य का वास्तविक महत्त्व समझ में आने लगा, संयम की श्रेष्ठता महसूस होने लगी।

इन पुस्तकों के मिलने के कुछ समय पश्चात् मैं [illegible] गया था। वहाँ पूर्व संस्कारों के कारण मन में अश्लील वि[illegible] का दौर पुनः शुरु हुआ। मैं वहाँ के वेश्या-घर के साम[illegible] गुजर रहा था कि अचानक एक वेश्या ने मेरा हाथ प[illegible] और मुझे जबरदस्ती अपने कमरे में ले गयी। कमरे में उ[illegible] रुपयों के लिए मेरी शर्ट की ऊपरी जेब में हाथ डाल[illegible] उसके हाथ में रुपयों की जगह बापूजी का चित्र 'नित्य दर्श[illegible] आया। उसे देखकर वेश्या की भावना में परिवर्तन आ[illegible] और उसने मुझे छोड़ दिया। पूज्य बापूजी की कृपा से मे[illegible] चरित्र गिरने से बच गया।

'दीपावली महोत्सव' सन् १९९३ में मैंने मंत्रदी[illegible] ली। इससे मुझे कुमार्ग के रास्ते से बचते हुए सुमा[illegible] (ईश्वरीय मार्ग) की ओर चलने की सुदृढ़ प्रेरणा मिली।

- भगवानभाई नारायणदास तारवाडी, रामपुरी कैम्प, अमरावती

जन्मदिवस के शुभ अवसर पर...

जन्मदिवस के दिव्य अवसर पर, अपने भाग्य को चमकायें।
सद्गुरुजी के दर्शन पाकर, जीवन अपना सफल बनायें॥
अनेक जन्मों के पुण्यों से, ऐसे गुरुवर प्राप्त हुए।
उनके मार्गदर्शन से ही तो, हम सब कृतार्थ हुए॥
जन्म-जन्म के भटके जीव का, कर दिया सद्गुरु ने कल्याण।
जितना भी करो उतना ही कम, श्रीसद्गुरु महिमा का बखान॥
जन्म-मरण के चक्कर से, गुरुवर ने हमको मुक्त किया।
आत्म-प्रकाश हृदय में भरकर, प्रभु-प्रेम से युक्त किया॥
हम अज्ञानी बालक थे, हम इन्द्रियों के वश थे।
परम सनेही संतकृपा से, अपने आत्मरस में तृप्त हुए॥
'हरि ॐ' की प्याली पिलाकर, कर दिया हमें भव से पार।
आत्मज्ञान का विवेक जगाया, इनकी तो है महिमा अपार॥
वाणी मधुर बनाकर हमारा, मद मोह लोभ छुड़ा दिया।
हरिनाम की महिमा बताकर, प्रभु प्रेम से जोड़ दिया॥
व्याकुल आपके दरश को बापू ! जल्दी ही दर्शन देना।
सद्गुरुजी को शत शत हैं नमन, प्रभुजी ! हमें भव से तारना॥
'नारायण हरि' से मन निर्मल, प्राणायाम से स्वस्थ शरीर।
इस संदेश के हैं गुरु दाता, जो हैं एक मस्त फकीर॥
बड़े दयालु सद्गुरु अपने, करुणा के भंडार हैं।
पूज्यश्री के श्रीचरणों में, हम सबका नमस्कार है!
परम सौभाग्य हमारा बापू ! करते हम सब वंदन हैं।
जन्मदिवस के शुभ अवसर पर, हम करते आपका अभिनंदन हैं!

- मंजरी अग्रवाल, अंगुल (उड़ीसा).

बड़ौदा (गुज.) : भक्तों को पूर्णिमा दर्शन अधिक- से-अधिक सुविधापूर्ण हो इसका भक्तवत्सल बापूजी खूब ख्याल रखते हैं। पूनम दर्शन २७ फरवरी को मुंबई में होगा ऐसा पहले से ही तय था। फिर भी २६ फरवरी को बड़ौदा आश्रम में भक्तों को पूज्यश्री का पूर्णिमा दर्शन प्राप्त हुआ। पूर्णिमा दर्शन की सूचना दो-तीन दिन पूर्व जाहिर होने पर भी भक्तों का बड़ा जनसैलाब उमड़ा।

पूज्यश्री ने बड़ी मार्मिक शैली में कहा : ''**वास्तविक सुख न धन में है, न पति में, न पत्नी में और न ही अन्य किसी वस्तु या कामना की पूर्ति में है। वास्तविक सुख तो कामना की निवृत्ति में ही है। दूर रहनेवाले मित्र से मिलने की इच्छा हुई। लम्बी यात्रा करके आप मित्र के पास पहुँचे। मित्र के सामने आते ही उससे गले मिले, सुख हुआ। हम समझते हैं कि मित्र के मिलने से सुख हुआ, पर वास्तव में मिलने में सुख है तो दिनभर गले मिलते रहो। लेकिन ऐसा करने पर थक जाओगे तो सुख गले मिलने से नहीं हुआ। गले मिलने पर वह इच्छा हटी और इच्छा हटने से सुख हुआ।**'' इस प्रकार बापूजी की वाणी मानों शिवजी के वचन सार्थक करती है। शिवजी कहते हैं : ''हे पार्वती ! दो प्रकार के तत्त्वज्ञानी होते हैं : मौनी और वक्ता। इनमें मौनी गुरु से (साधारण मति के) लोगों को लाभ नहीं होता, परंतु वक्ता गुरु शास्त्र-युक्ति और अनुभूति से उनके सभी संशयों का छेदन करने में और भयंकर संसारसागर से पार कराने में समर्थ होते हैं।''

मुंबई (महा.) : हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक और कलकत्ता से लेकर मुंबई तक सभी जगहों पर पूज्य बापूजी का सत्संग-अमृत व सुख-शांति की कुंजियाँ सभी चाहते हैं। देशभर की समितियाँ बापूजी के सत्संग की माँग करती रहती हैं। मुंबई के श्रद्धालु भक्तजनों ने सत्संग-प्राप्ति हेतु कई बार 'श्रीआसारामायण' के पाठ किये, तप-तितिक्षा सहन की। फलस्वरूप करुणासिंधु बापूजी की कृपा बरसी और मुंबईवासियों को मिला हरिरस में सराबोर होने का पुण्यमय सुअवसर।

२७ फरवरी से ३ मार्च अर्थात् पाँच दिवसीय 'ज्ञान भक्ति योग सत्संग-वर्षा'... मायानगरी बनी भक्तनगरी... देश-विदेशों से बड़ी संख्या में आये भक्त लाभान्वित... महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री श्री विलासराव देशमुख, गृहराज्यमंत्री श्री कृपाशंकर सिंह, भाजपा नेता श्री गोपीनाथ मुंडे, शिवसेना के नेता श्री उद्धव ठाकरे, सुश्री अस्मिता ठाकरे और अनेक राजनेताओं ने दर्शन-सत्संग का लाभ लिया... देश के विभिन्न भागों से पूनम व्रतधारी साधक-साधिकाओं के आगमन से वातावरण बना हरिमय... महाराष्ट्र बंद... सड़क पर न कार, न स्कूटर फटक सकते थे... कुछ समय के लिए रेलवे बंद... लेकिन सत्संग बंद नहीं... प्रभु के प्यारे पैदल ही आते रहे। पुलिस और हड़ताली दोनों, सत्संगियों की श्रद्धा देखकर उनकी सेवा में सहभागी बने... ये थीं मुंबई के सत्संग समारोह की कुछ झलकियाँ।

पूज्यपाद बापू ने मायानगरी के लोगों को मायापति भगवान से मिलने की युक्तियाँ बताईं। उलझनपूर्ण एवं समस्याओं से भरे संघर्षमय जीवन में भी सुखी-आनंदित रहने की कुंजियाँ सत्संगियों ने प्राप्त कीं। पूज्य बापू ने कहा : ''**पुण्य-पाप एवं धर्म-अधर्म का फल भविष्य में मिलता है। वर्त्तमान में उसका फल अज्ञात है लेकिन सत्संग का फल तुरंत मिलता है। चिन्ताएँ कम हो जाती हैं, चित्त निर्भार, निरहंकार एवं निर्मोह होकर सद्‌गुणों से सम्पन्न होने लगता है। हृदय में आनंद की अनुभूति होती है। मनुष्य का जीवन सुखमय होने की राह पर चल पड़ता है।**''

पूज्य बापूजी ने श्रोताओं में उत्साह और पुरुषार्थ का संचार करते हुए ओजमयी वाणी में कहा :

असफल भी सफल हो जाता है, निर्बल भी सबल हो जाता है।
परिवर्तन की है गजब क्षमता, कीचड़ में भी कमल हो जाता है॥

''**अपने जीवन में परिवर्तन लाइये। दुःख, चिंता और परेशानियों से कब तक परेशान होते रहोगे ? मन का पेट इच्छाओं, वासनाओं से भरा हुआ है। उसे खाली करते जाइये और भगवत्प्रीति भरते जाइये।**''

औरंगाबाद (महा.) में ४ से ६ मार्च तक आयोजित 'शिक्षक एवं साधक शिविर' में शिविरार्थियों के भौतिक जीवन में आध्यात्मिकता के समावेश पर बल दिया गया। जीवनी शक्ति का विकास करना तथा जीवन को उर्ध्वगामी करना अत्यंत सुगम होते हुए भी उचित मार्गदर्शन की कमी और मैकाले की निकृष्ट शिक्षापद्धति के कारण शिक्षक और विद्यार्थी इन महत्त्वपूर्ण बातों को नहीं जानते। यह शिविर इस कमी को पूरा करने का एक सुंदर व सफल प्रयास था। देश के विभिन्न भागों से आये शिक्षक, साधक एवं स्थानीयजनों ने जीवन-विकास की अत्यंत सरल, सुगम एवं प्रभावशाली कुंजियाँ प्राप्त कीं। बापूजी के सत्संग में मानों 'जेट युग' के शीघ्र उँचाई पर ले जानेवाले आध्यात्मिक साधना मार्गों एवं प्रयोगों का विशाल भंडार खुल जाता है। यहाँ पर कितना-कितना लिखें ? यह तो सत्संग में आकर अनुभव करने की ही चीज है।

जब ब्रह्मनिष्ठ बापूजी ने श्रोताओं की ओर संकेत करते हुए कहा : ''आप लोग भोजन मत किया करो ।'' तब श्रोतासमुदाय आश्चर्यचकित, स्तंभित-सा होकर बापूजी की ओर निहारने लगा। कुछ क्षण चुप्पी साधे हुए बापूजी ने फिर कहा : ''आप भोजन के पूर्व भगवान को भोग लगायें, फिर भोजन-प्रसाद ग्रहण करें । आप दैनिक जीवन में भगवान को लाओ इससे आपका प्रत्येक कर्म भजन हो जायेगा, जीवन साधनामय हो जायेगा।

तुलसी के पत्ते खाने से मलेरिया मिटता है। 'ॐ' का जप करने से दमा में फायदा होता है । लेकिन आप इनका उपयोग केवल इन्हीं हेतुओं से न करें। तुलसी भगवत्प्रसाद है । भगवत्प्रीति के लिए भगवान का प्रसाद समझकर तुलसी-सेवन करें, जिससे शरीर में तुलसी के गुणधर्मों से शारीरिक स्वास्थ्य का तथा भगवद्भावना से आध्यात्मिक लाभ हो। ऐसे ही ओंकार अनहद नाद है । पाँचों शरीरों को शुद्ध करते हुए तुरंत भगवद्सत्ता से सम्बन्ध जोड़नेवाले इस ॐकार नाम का केवल दमा मिटाने के लिए प्रयोग में लाना यह बहुत छोटी बात है । ऐसे ही पेट भरने के लिए भोजन करना बहुत छोटी बात है । प्रभु को अर्पण करके भोजन-प्रसाद लो ताकि पाँचों इंद्रियाँ पवित्र हो, चारों अंतःकरण पावन हो। अतः आज से भोजन करना बंद कर दो, भोजन-प्रसाद ही ग्रहण करो।''

नासिक (महा.) : महाशिवरात्रि महोत्सव हो और तत्त्वरूप से शिवजी से एकता प्राप्त किये सद्गुरु का सत्संग-सान्निध्य मिले तो कहना ही क्या ! ९ से १२ मार्च तक यही पुण्यमय अवसर मिला महाराष्ट्र के महा पुण्यात्माओं और नासिकवासियों को। शिवजी की पूजा करना, स्तोत्रपाठ करना तो अच्छा है लेकिन शिवतत्त्व में रमण करनेवाले महापुरुष की अमीमय नजरों से निहाल होना और आत्मशिव के रसपान का सुअवसर पाना यह तो पूज्य बापूजी की महान करुणा एवं भक्तों की सत्संग की प्यास का ही फल है। पूज्यश्री ने विविध सुंदर दृष्टांतों, कथाओं एवं सारगर्भित सरल सिद्धांतों के माध्यम से शिवरात्रि का स्थूल अर्थ, लक्ष्यार्थ एवं तात्त्विक अर्थ बताया। पूज्यश्री ने कहा : ''आसक्ति वैसे तो बड़ी दुर्जय है, उसे मिटाना कठिन है किन्तु वही आसक्ति यदि शिवतत्त्व में जगे हुए संतों में हो जाय तो वह संसारसागर से तारनेवाली हो जाती है ।'' पूज्यश्री ने शिवजी के विविध आभूषणों का लक्ष्यार्थ बताते हुए श्रद्धालुओं के जीवन को उर्ध्वगामी बनाने की सुंदर युक्तियाँ बताई और कहा : ''आजकल आध्यात्मिक शास्त्रों का अर्थ अपनी संकुचित बुद्धि से लगानेवालों ने समाज को भ्रमित कर रखा है। शास्त्रों में आता है कि 'शिवजी को भुवन भंग का व्यसन है।' परन्तु जिन्हें अपना भाँग पीने का शौक पूरा करना है, ऐसे भँगेडि ने फैलाया कि शिवजी को भाँग पीने का व्यसन है और सम में वही मान्यता दृढ हुई । हम सबको सत्शास्त्रों का स अर्थ जानने की जरूरत है, अन्यथा जीवन-उत्थान व उद्देश्य एक स्वप्नमात्र रह जायेगा।''

धुलिया (महा.) : यहाँ निर्माणाधीन 'संत श्री आसारामजी आश्रम' की कुटीर में कुछ दिनों के एकांतवा हेतु पूज्यश्री पधारे। यहाँ की जनता जनार्दन को एक दिवसी सत्संग-सान्निध्य का लाभ मिला। सुंदर खुले वातावरण म नहर के किनारे और पहाड़ी के निकट आश्रम का निर्माण ह रहा है। बापूजी के एकांतवास के लिए बनी कुटिया लोगों क लिए संयम, साधना-स्थली बन गयी और भक्तों को मनौति पूर्ण करने का सुअवसर मिला।

पूज्य बापूजी के सत्संग कार्यक्रम

(१) धुलिया : २० मार्च २००२. एस. एस. वी. पी.एस. कॉलेज ग्राउण्ड, देवपुर, धुलिया । फोन : (०२५६) २४६०००, २४४५८५.

(२) मालेगाँव : २२ से २४ मार्च २००२. एम.एस.जी. कॉलेज ग्राउण्ड, मालेगाँव कॅम्प, ता. मालेगाँव, जि. नासिक (महा.). फोन : (०२५५४) ४१४५३३, ४१५६४१, ४१५६४९.

(३) पूना : २४ मार्च शाम से २६ मार्च २००२. लक्ष्मीबाई राजाराम शिन्दे हाई स्कूल, सहकार नगर-II, पूना। फोन : (०२०) ६१२१७३०, ६१४१८२७.

(४) सूरत होली महोत्सव : २८ से ३१ मार्च २००२. *पूर्णिमा दर्शन २८ मार्च ।* संत श्री आसारामजी आश्रम, जहाँगीरपुरा. फोन : (०२६१) २७७२२०१, २७७२२०२.

(५) अमदावाद : १२ से १४ अप्रैल २००२, चेटीचंड ध्यानयोग शिविर और १५ से १७ अप्रैल २००२, विद्यार्थी तेजस्वी तालीम शिविर। संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमती, अमदावाद। फोन : ७५०५०१०-११.

(६) कोलकता : १८ से २१ अप्रैल २००२. प्रथम दिन श्रद्धेय श्री नारायण साँई और श्री सुरेशानंदजी द्वारा। १९ अप्रैल विद्यार्थियों के लिए विशेष । मोहन बागान ग्राउण्ड। फोन : (०३३) २३६८९९८, ४७९२७७९. आश्रम : ४३२७२७६, ४३२७२८०.

(७) लखनऊ : २५ से २८ अप्रैल २००२. ३२ PAC बटालियन के पीछे, कानपुर रोड़, लखनऊ (उ.प्र.). पूर्णिमा दर्शन : २८ अप्रैल। फोन : ५०७११, ४३१३१७, ७१२१२०, ४५३२०६.

← सांताक्रुज (मुंबई) में पूज्यश्री से आशीर्वाद पाते हुए महाराष्ट्र के शिवसेना नेता श्री उद्धव ठाकरे और मुख्यमंत्री श्री विलासराव देशमुख। →

महाराष्ट्र था बंद, फिर भी सत्संगी न थे कम। खचाखच पंडाल भरा था, बापूजी के संग संग ॥
सांताक्रुज (मुंबई) में आयोजित पूर्णिमा दर्शन तथा सत्संग की एक झलक।
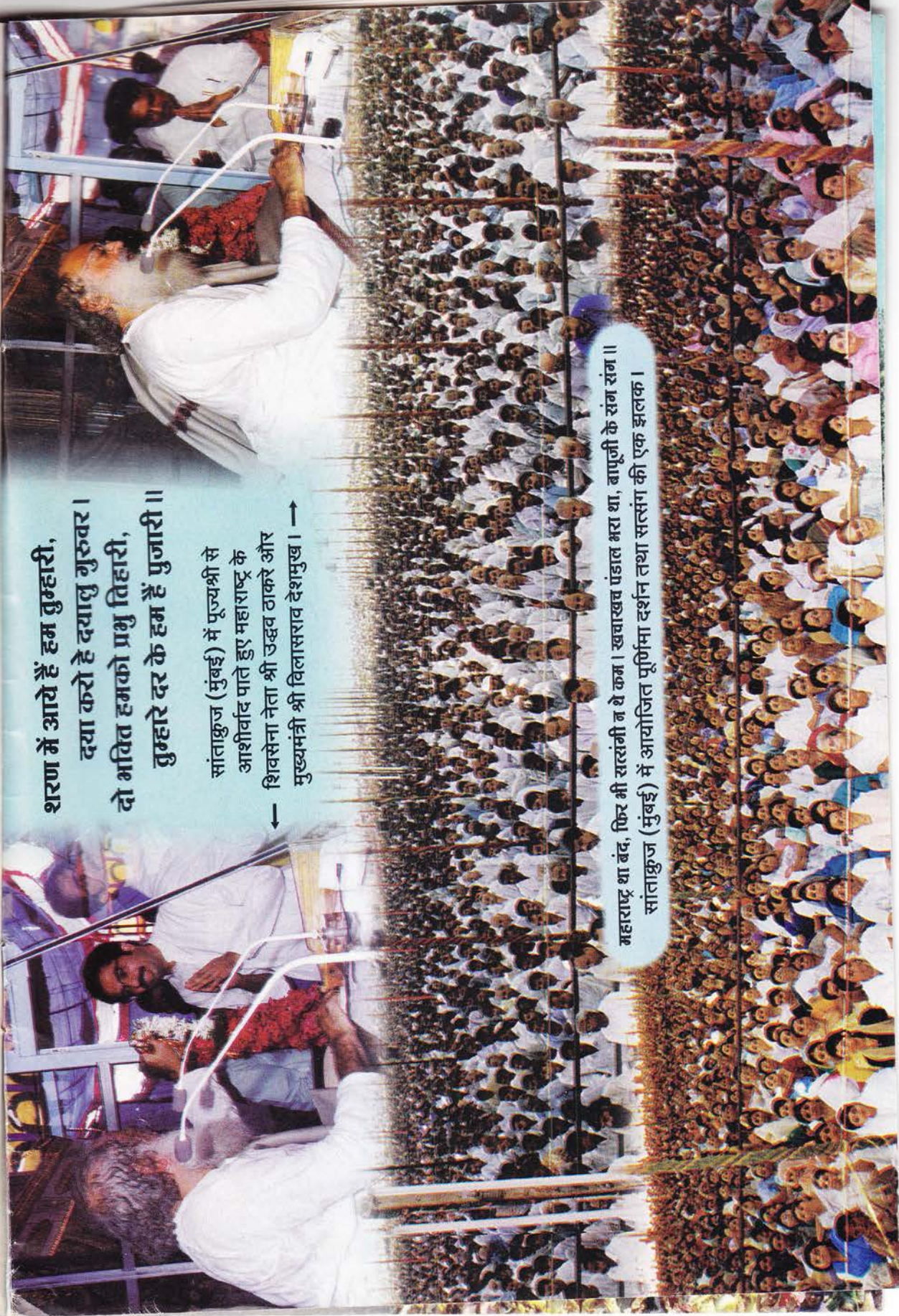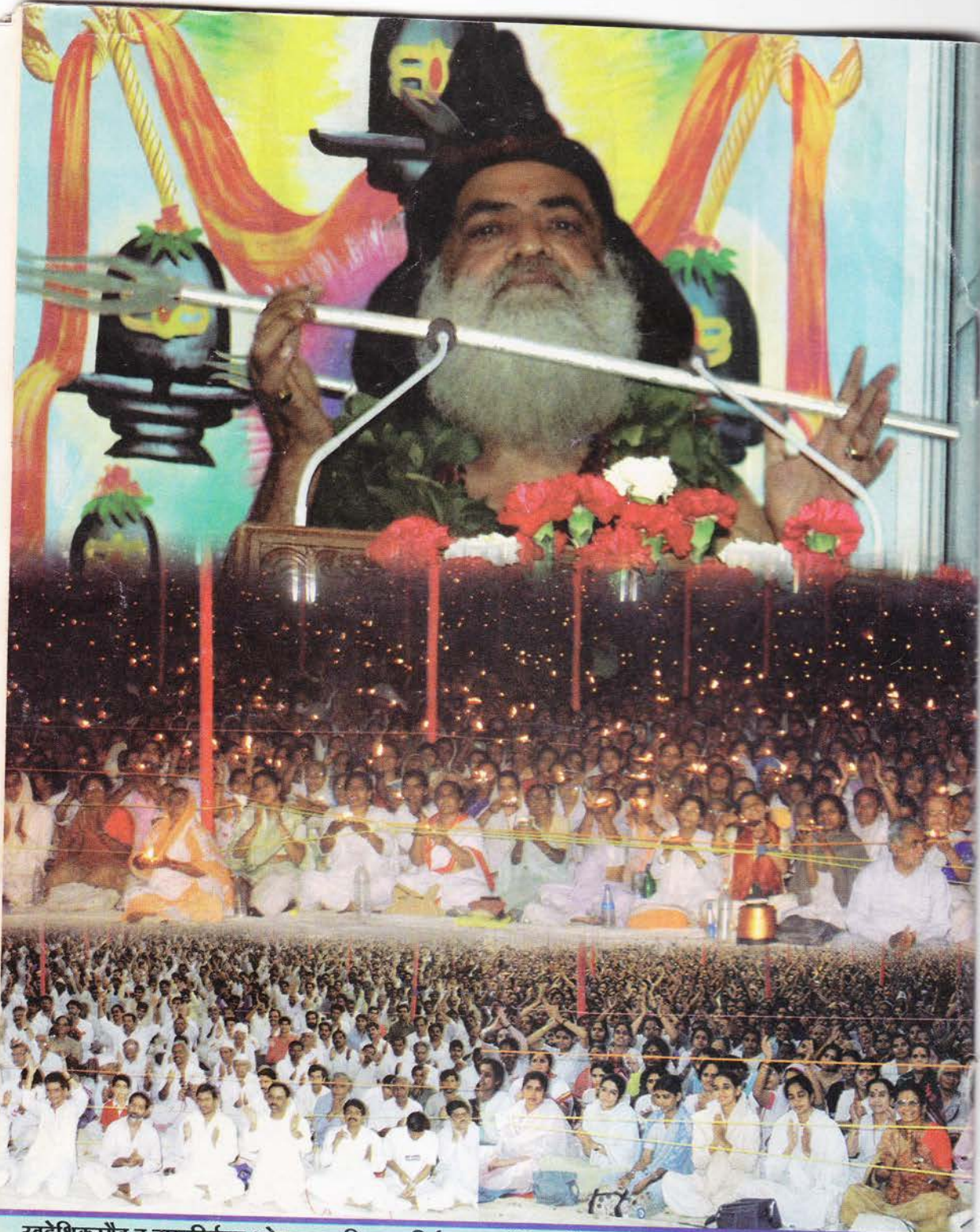
स्वदेशिकस्यैव च नामकीर्तनम् भवेदनन्तस्यशिवस्य कीर्तनम् । स्वदेशिकस्यैव च नामचिन्तनम् भवेदनन्तस्य शिवस्य चिन्तनम् ॥

अपने गुरुदेव के नाम का कीर्तन अनंतस्वरूप भगवान शिव का ही कीर्तन है।
अपने गुरुदेव के नाम का चिंतन अनंतस्वरूप भगवान शिव का ही चिंतन है।
महाशिवरात्रि के पावन पर्व पर ऐसे शिवस्वरूप सद्गुरुदेव की आरती उतारकर
नामसंकीर्तन करते हुए कृतार्थ हो रहे हैं नासिक (महा.) के धनभागी भक्तगण।

R.N.I. NO. 48873/91 REGISTERED. NO. GAMC/1132/2002. LICENSED TO POST WITHOUT PRE-PAYMENT LICENSE NO. 207. POSTING FROM AHMEDABAD 2-10 OF EVERY MONTH.
BYCULLA STG. WITHOUT PRE-PAYMENT LIC. NO. 236 REGD NO. TECH/47 833/MBI/2002 POSTING FROM MUMBAI 9 & 10th OF EVERY MONTH.
DELHI REGD. NO. DL-11513/2002 WITHOUT PRE-PAYMENT LIC. NO.-U(C) 232/2002 POSTING FROM DELHI 10-11 OF EVERY MONTH.